YA BHATTI VIJYAN PATRIKA
1931 G. K. U

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज
जिन्होंने उच्च आदर्शों के लिए गुरुकुल की स्थापना की

ओ३म्

आर्यभट्ट

विज्ञान-पत्रिका

अप्रैल १९८१

सम्पादक :

डॉ० विजय शंकर

अध्यक्ष : वनस्पति विज्ञान विभाग

परामर्शदाता :

प्रो० सुरेश चन्द्र त्यागी

प्राचार्य : विज्ञान महाविद्यालय

प्रकाशक :

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

उत्तर - प्रदेश

मूल्य : ५-००

मुखपृष्ठ : प्रेम जुयाल

विषय-सूची

* * *

आभार प्रकट

गुरुकुल कांगड़ी प्रिंटिंग प्रेस ने जिस तत्परता एवं लगन के साथ विज्ञान पत्रिका को इतने कम समय में प्रकाशित करने में योगदान दिया है उसके लिये हम डॉ० हरिप्रकाश जी जनरल मैनेजर गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी एवं मुद्रणालय, श्री श्रीकृष्ण जी, श्री प्रद्युम्न कुमार जी पाण्डे एवं प्रेस के समस्त कर्मचारियों का हृदय से आभार प्रकट करते हैं।

सम्पादक

प्राचार्य : सुरेश चन्द्र त्यागी

८ अप्रैल १९८१

संदेश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि इस वर्ष दीक्षान्त समारोह के अवसर पर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय "आर्य भट्ट विज्ञान पत्रिका" प्रकाशित कर रहा है। मैं आशा करता हूँ कि यह सरल हिन्दी भाषा में जन साधारण तक विज्ञान एवं टेकनालाजी की जानकारी पहुंचाने की सफल माध्यम सिद्ध होगी। विश्वविद्यालय से हिन्दी भाषा में प्रकाशित होने वाली यह प्रथम वैज्ञानिक पत्रिका है। इस अंकमें वेदों में उपलब्ध विज्ञान से लेकर आधुनिक वैज्ञानिक विषयों पर लेख प्रकाशित हुए हैं। सम्पादक महोदय ने कतिपय वैज्ञानिक अन्वेशणों एवं समस्याओं को पद्य बद्ध रचनाओं में प्रस्तुत करके विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में एक नई दिशा प्रदान की है।

मुझे पूर्ण आशा है कि पत्रिका जन साधारण एवं विद्यार्थियों की भारत के विज्ञान के प्रति आस्था को बलवती करेगी एवं उन्हें समाज की वर्तमान समस्याओं जैसे ऊर्जा एवं प्रदूषण आदि से जुझने के लिए प्रेरित करेगी।

मैं इस नवीन प्रकाशन की सफलता की हृदय से कामना करता हुआ विज्ञान महाविद्यालय के प्राचार्य श्री सुरेशचन्द्र त्यागी और इनके सहयोगियों डा० विजय शंकर, प्रो० हरिशचन्द्र ग्रोवर इत्यादि को इस उपक्रम पर बधाई देता हूँ।

बलभद्रकुमार हूजा
कुलपति

प्रो० ए० जी० के० मेनन
महानिदेशक

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद
न्यू दिल्ली-११०००१.

अ. स. सं० डीजो / सी एस आई आर / ८१-

दिनांक : मार्च, १९८१

प्रिय श्री शंकर,

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अपने दीक्षान्त समारोह के अवसर पर 'आर्य भट्ट' नामक पत्रिका प्रकाशित कर रहा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबन्धित सिद्धान्त और ज्ञान के साथ इसमें अन्तर्निहित दर्शन, विधि एवं दृष्टिकोण, जिनसे विज्ञान का निरुपण होता है, का भी प्रचारण बहुत महत्वपूर्ण है। हमारे समाज में वैज्ञानिक चेतना का जिस सीमा तक समावेश हो सकेगा अन्ततः उसी से हमारी न केवल भौतिक बल्कि मानवीय खुशहाली और जीवन स्तर की सच्ची प्रगति परिभाषित हो सकेगी।

मैं प्रकाशन की हर सफलता की कामना करता हूं।

आपका

एम. जी. के. मेनन

डा० त्रिलोकी नाथ खूशू
निर्देशक

राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान
लखनऊ

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार इस वर्ष जनसाधारण के लिए सुबोध हिन्दी भाषा में 'आर्यभट्ट' पत्रिका प्रकाशित कर रहा है जिसका उद्देश्य विज्ञान और तकनालाजी की उपलब्धियों को आम लोगों तक पहुँचाना है। मैं आशा करता हूं कि इससे जन सामान्य में विज्ञान के प्रति अभिरुचि बढ़ेगी और हिन्दी को उसका गौरवपूर्ण स्थान मिलने में सहायता मिलेगी। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय सचमुच, इस प्रयास के लिए बधाई का पात्र है और मैं आर्यभट्ट' पत्रिका की सफलता हेतु हृदय से कामना करता हूँ।

त्रिलोकी नाथ खूशू

केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्थान, रुड़की--२४७६६७ (भारत)

निदेशक

पत्रांक: १८८ / सूचना / ८१

दिनांक: २३-३-१९८१

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार अपने दीक्षान्त समारोह के अवसर पर इस वर्ष विज्ञान एवं टैक्नोलोजी की जानकारी जन-साधारण को उपलब्ध कराने के निमित्त "आर्यभट्ट" नाम से एक पत्रिका का प्रकाशन कर रहा है। मुझे आशा है कि हिन्दी भाषा में प्रकाशित इस पत्रिका का देश में उपलब्ध विज्ञान एवं तकनीकी ज्ञान को जन साधारण तक पहुंचाने में अपना एक विशिष्ट महत्वपूर्ण योगदान रहेगा तथा पत्रिका का प्रकाशित यह अंक संग्रहणीय होगा।

पत्रिका की सफलता के लिये में अपनी हार्दिक शुभ कामनायें भेज रहा हूँ।

निदेशक

दिनेश मोहन

दूरभाष : कार्यालय : हरिद्वार १२६ निवास : हरिद्वार २५४. टैलेक्स नं० ०५६५-२४१ एवं २४४

प्रेम सागर गुप्ता
अधिशासी निदेशक

भारत हैवी इलैक्ट्रिकल्स लिमिटेड
रानीपुर, हरिद्वार-२४६४०३

सन्देश

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अपने दीक्षान्त समारोह के अवसर पर "आर्य भट्ट" पत्रिका प्रकाशित कर रहा है। खासतौर से मुझे यह जानकर खुशी हुई कि इस प्रत्रिका में सरल और सुबोध हिन्दी में विज्ञान और टेक्नोलाजी सम्बन्धी जानकारी दी जाएगी। यह प्रयास सचमुच प्रशंसनीय है।

हमारे देश ने विज्ञान और टैक्नोलाजी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति की है, जिसका फल हमारे सभी साथी देशवासियों को प्राप्त हो रहा है। यह भी समान रूप से महत्वपूर्ण है कि इस क्षेत्र में हुई प्रगति लोगों तक उस भाषा में प्रचारित की जाय जिसे वे आसानी से समझ सकें।

मैं इस प्रयास की सफलता की कामना करता हूं।

प्रेम सागर गुप्ता
अधिशासी निदेशक

VINOD K. GAUR FNA PROFESSOR OF GEOPHYSICS
DEAN RESEARCH AND INDUSTRIAL LIAISON
UNIVERSITY OF ROORKEE

पत्र सं. ड्रिल / सामान्य / एस-३९/
दिनांक २६ मार्च १९८१

सेवा में

सम्पादक,
"आर्य भट्ट"
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय,
हरिद्वार—२४९४०४.

महोदय !

मुझे यह जानकर अति प्रसन्नता हुई कि विज्ञान महाविद्यालय, गुरुकुल कांगड़ी, सरल सुबोध जन साधारण में विज्ञान एवं टैक्नालाजी की जानकारी बढ़ाने के लिए 'आर्य भट्ट' पत्रिका प्रकाशित कर रहा है। मुझे आशा है कि यह पत्रिका जन साधारण में विज्ञान एवं तकनीकी जानकारी के विस्तार की आवश्यकता की पूर्ति करेगी तथा उनमें देश में हुई तकनिकी उपलब्धियों के प्रति प्रेरणा उत्पन्न करेगी।

भवदीय

विनोद कुमार गौड़

विकास व आधुनिकीकरण तथा प्रगति और समृद्धि को बढ़ाने वाले कारक के रूप में विज्ञान में नेहरू जी का अपार एवं दृढ़ विश्वास था। १९४७ में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश के राजनीतिक और वैज्ञानिक नेतृत्व के मध्य बने समीकरण "नेहरू - भटनागर - प्रभाव" के फलस्वरूप देश के विभिन्न भागों में राष्ट्रीय प्रयोगशालायें खुलीं। इनका सुफल हमें आज प्राप्त हो रहा है। ऐसे प्रबुद्ध नेतृत्व के प्रति हम अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

(चित्र—अगस्त सन् १९५८ में श्री जवाहरलाल नेहरू विज्ञान-भवन का उद्घाटन करने के लिए गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में पधारे थे)।
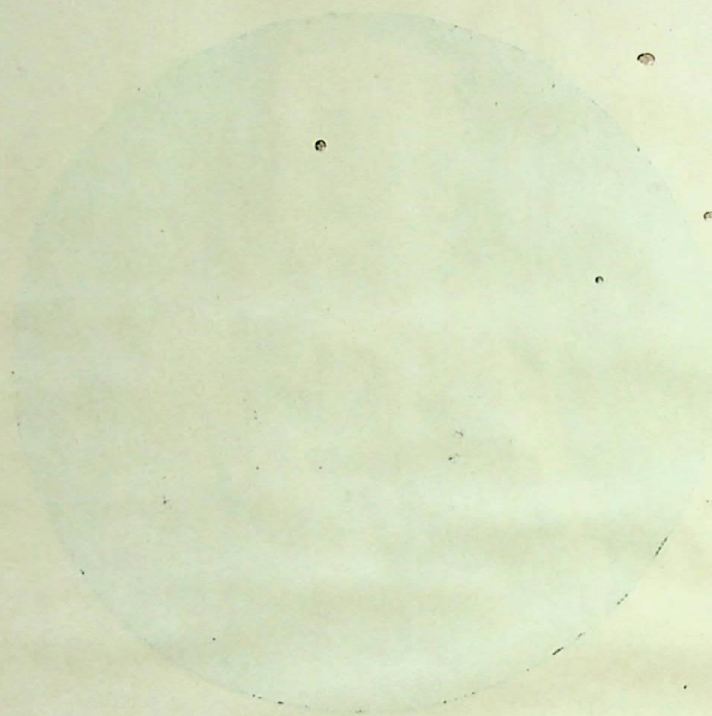
सम्पादकीय

विश्वविद्यालय प्रणाली के समाज के प्रति महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व हैं। इस प्रणाली के अनेक कार्यों में से एक समाज में वैज्ञानिक मनः-स्थिति एवं तर्कशील दृष्टि कोण को पनपाना है। अन्धविश्वास को दूर करना है। ज्ञान को विक-सित करना और उसे साधारण जन तक पहुंचाना जिससे उनके व्यक्तित्व का पूर्ण रूप से विकास हो सके, यह कार्य भी विश्वविद्यालय का ही है। इस श्रृंखला में विचार करते हुये गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के वर्तमान कुलपति श्री गोवर्द्धन बलभद्र कुमार जी हूजा ने विश्वविद्यालय से अनेक ज्ञानवर्द्धक पत्रिकायें प्रकाशित करने का निर्णय लिया। विज्ञान की यह पत्रिका उनमें से एक है। श्री कुलपति जी के पवित्र उपक्रम एवं प्रेरणा के फलस्वरूप यह पत्रिका आज आपके हाथों में है। पत्रिका के प्रकाशन के लिए समय कम था, अतः यदि इसमें कुछ त्रुटियाँ रह गई हों तो पाठक उन्हें क्षमा करेंगे। इसमें प्रकाशित सामग्री, जिनका पूरा उत्तरदायित्व लेखकों का अपना है, यदि आपके मस्तिष्क की एक भी नई खिड़की विश्व पर खोल देती है, लेखों के पढ़ने से यदि आपकी आस्था एवं निष्ठा भारत की संस्कृति एवं विज्ञान के प्रति बलवती होती है, यदि लेख आपको समाज की समस्याओं से अवगत कराते हैं और उनसे जूझने के लिए आपको प्रेरित करते हैं तो विश्विद्यालय द्वारा इस पत्रिका का प्रकाशन हम सफल समझेंगे। पत्रिका वैज्ञानिकों को, अध्यापकों एवं विद्यार्थीयों को वैज्ञानिक विषयों पर हिन्दी में लिखने को प्रोत्साहित करेगी ऐसी आशा की जाती है। गुरुकुल कांगड़ी विश्व-विद्यालय से हिन्दी में प्रकाशित होने वाली यह प्रथम वैज्ञानिक पत्रिका है।

हिन्दी के माध्यम से जब विज्ञान के प्रसार की बात आती है तो अनायास गुरुकुल के उन विद्वानों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट होता है जिन्होंने विज्ञान की पुस्तकों को अंग्रेजी भाषा से हिन्दी भाषा में अनूदित किया। इनमें अग्रणी होने का श्रेय वर्तमान कुलपति जी के पिता जी श्री गोवद्धन जी को जाता है। बाद में गुरुकुल के पूर्व कुलपति श्री सत्यव्रत जी के कार्यकाल में डा० विजयशंकर, डा० चम्पत स्वरुप, डा० कृष्णकुमार प्रो० भूमदेव और प्रो० बुद्ध प्रकाश आदि ने इस क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया।

गुरुकुल कांगडी विश्वविद्याय के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी का यह विचार था कि गुरु-कुल में वेद, संस्कृत आदि के साथ-साथ विज्ञान की शिक्षा भी दी जानी चाहिए। हमें प्रसन्नता है कि उनके इस विचार को यह पत्रिका कुछ अंशों में साकार कर रही है। इस अवसर पर उस महान् संन्यासी की याद आना स्वाभाविक है। उनको हमारा शत–शत प्रणाम।

पत्रिका सरल सुबोध हिन्दी भाषा में है। यह जनसाधारण एव विद्यार्थियों को विज्ञान एवं टेक-

नोलोजी की जानकारी और उनकी उपयोगिता से अवगत करायेगी। विज्ञान क्या है? यह उन तथ्यों की एक क्रमानुगत व्यवस्था है जिनकी जान कारी हम अपने आस पास के संसार का अध्ययन करके प्राप्त करते है। इन तथ्यों को अलग अलग विज्ञानों में बांट दिया गया है– पौधों का अध्ययन, सितारों एवं अंतरिक्ष के पिण्डों का अध्ययन, जन्तुओं का अध्ययन। लेकिन विज्ञान तथ्यों के क्रमानुगत व्यवस्था से कुछ अधिक है। यह विचार और तर्क करने की एक प्रणाली भी है, सत्य को खोजने की एक विधि। हमें इस बात का गर्व है कि भारत वह देश है जहाँ वैज्ञनिक प्रणाली सर्वं प्रथम प्रयोग में लाई गई। वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान का उद्देश्य ज्ञान संचित करना, समाज की सेवा के लिए ज्ञान का उपयोग करना और औद्योगिक एवं आर्थिक विकास को उत्प्रेरित करना है। प्रत्यक्ष है कि विज्ञान का जन मानस से सीधा सम्बन्ध है।

पत्रिका का नाम भारत के महान खगोल-वैज्ञानिक और गणितज्ञ "आर्य भट्ट" के नाम पर रखा गया है। यह प्रसिद्ध वैज्ञानिक सन् ४७६ में पटना के पास कुसुमपुरा गाँव में पैदा हुए थे। २३ वर्ष की उम्र में उन्होंने "आर्य भटोयम" नामक ग्रंथ की रचना की। उन्होंने प्रथम बार 'पाये' का निकटतम मूल्य सुझाया। आर्य भट्ट की भाँति भारत में प्राचीन समय में अनेक अन्य वैज्ञानिक भी हुए हैं जिन्होंने ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में सराहनीय योग दान दिया है — जैसे अश्विनी कुमार, जीवक, भास्कराचार्य, कणाद, कपिल, नागार्जुन, अग्निवेश, आत्रेय, ऋभु नाम से जाने वाले इञ्जीनियर, चरक सुश्रुत आदि।

हमारे प्राचीन ग्रंथों में अनेक वैज्ञानिक विषयों पर सामग्री मिलती है। अश्वनी कुमार ने, जो प्रसिद्ध व शल्य चिकित्सक होते थे, शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में चमत्कारी सफलता प्राप्त की। ऐसा उल्लेख है कि उन्होंने विश्वपाल की टूटी टांग के स्थान पर लोहे की टांग लगाई, भागा की खराब आँख को निकाल कर उसके स्थान पर नई आंख लगाई, इन्द्र के लकवे-ग्रस्त हाथ को ठीक किया, वृद्ध च्वयन को यौवन प्रदान किया, यज्ञ के कटे हुए सिर को फिर से लगा दिया और दधीची के कटे हुए सिर के स्थ न पर पहले घोड़े का और बाद में उनका स्वयं का सिर लगा दिया। एक अन्य वैज्ञानिक जीवक वनस्पतियों का गहन अध्ययन करके इस निष्कर्म पर पहुंचे कि प्रत्येक वनस्पति की उपयोगिता है और कोई वनस्पति बेकार नहीं हैं। इस पृथ्वी पर समुपलब्ध साहित्य के सबसे प्राचीन ग्रंथ वेदों में यज्ञ द्वारा चिकित्सा एवं पर्यावरण को शुद्ध रखनेका वर्णन मिलता है। अनेक ऐसे पौधे जिनके औषधीय गुणों का वर्णन हमारे प्राचीन ग्रन्थो में उपलब्ध है, आधुनिक विज्ञान की कसौटी पर खरे उतरे हैं, जैसे– सर्पगंधा, गुग्गुल, ब्रह्मी बूटी, अपामार्ग, रुद्रवन्ती, कनेर, लहमन, शुन्निशन्नक घृतकुमारी आदि। हमारे पूर्वजो की विज्ञान के क्षेत्र में रुचि, सफलता एव उपलब्धियाँ हमारे लिए एक ऐसी निधि है जिनसे हमें सदैव प्रकाश मिलता रहेगा और जो हमारे लिये प्रेरणा के स्रोत हैं। विज्ञान का शायद ही कोई क्षेत्र रहा हो जिसने उन्हें आकर्षित न किया हो।

चरक (दूसरी शताब्दी ई० पू०) ने शरीर और मानसिक स्वास्थ्य के लिये अच्छे चाल-चलन पर जोर दिया। उन्होंने शरीर-रचना विज्ञान, अस्थि विज्ञान, निदान, परिचर्या आदि पर

विस्तार से लिखा है। उनका कहना है कि स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन, धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष की प्राप्ति में सहायक होते हैं। पश्चिम में जो आज 'होलिस्टिक हैल्थ' की बात होने लगी है वह वहाँ के लिए नई हो सकती है हमारे देश में तो स्वास्थ्य की परिभाषा पहले से ही इस प्रकार की है बल्कि इससे भी अधिक पूर्ण।

समदोष समाग्निश्च समधातु मलक्रियः
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः स्वस्थ इत्यभि धीयते।

—चरक

सुश्रुत जो कि कुशल सर्जन थे उनकी कृति सुश्रुत संहिता ईसा से कई शताब्दियों पूर्व प्रचलित सर्जरी के ज्ञान का स्रोत है। उसमें पुराने सर्जनों के अनुभव तथा वैदिक साहित्य में बिखरे हुये तथ्यों की भी चर्चा है। उन्होंने गर्भाधान, जन्म और औषधियों के संबन्ध में भी लिखा है। मनुष्य में इस बात की हमेशा उत्सुकता रही है कि पैदा होने वाला बच्चा लड़का होगा या लड़की? वह यह भी जानना चाहता है कि क्या मन चाहे सेक्स का बच्चा पैदा करना सम्भव है। सुश्रुत इसके लिये सूंघने, भोजन के नियमों और चाल-चलन के नियम बताते है। उन्होंने यह भी लिखा है कि किन्ही अपवाद परिस्थिति में बिना यौन सम्बन्ध के भी शिशु जन्म हो सकता है। सुश्रुत का यह विचर क्या आज के टेस्टट्यूब बेबी की ओर इशारा नहीं करता रहा होगा। ऑपरेशन के बारे में निर्देश देते हुये वह लिखते हैं कि कमरे को सफेद सरसों, नीम की पत्तियों, और साल के गोंद के धुएं से स्वच्छ करना चाहिये। उन्होंने प्लास्टिक सर्जरी का भी जिक्र किया है।

वेदों में नभ, जल, और थल तीनों स्थानों में अव्याहत गति से विचरने वाले वायुयान, जलयान, तथा स्थलयान का बहुत विस्तृत वर्णन मिलता है। इसी भाँति भारद्वाज ऋषि कृत वृहत विमान शास्त्र पुराणों तथा महाकाव्यों में भी वर्णन मिला है। आधुनिक विश्व में वैमानिक और अन्तरिक्ष उड़ान के क्षेत्र में विलक्षण प्रगति हुई है। जहाँ अन्य देशों में इस क्षेत्र में विजय प्राप्त करने की पहल की वहाँ भारतवर्ष ने भी सराहनीय सफलता पायी। १९ अप्रैल १९७५ को भारतीय उपग्रह आर्य भट्ट ने तीस हजार किलो मीटर प्रति घन्टे की गति से पृथ्वी की परिक्रमा करना आरम्भ किया। भारत के साहसी युवा पीढ़ी, भारत के निष्ठावान वैज्ञानिकों और उदार नेताओं के कारण ही यह महानउपलब्धि सम्भव हो सकी। उपग्रह टेकनोलोजी के द्वारा मौसम सम्बन्धी भविष्य वाणी; और संचार के क्षेत्र से सम्बन्धी जानकारी देश के जन-जीवन के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। दूर दर्शन और संदेश प्रसारण में उपग्रहों ने तीव्र क्रांति कर डाली। उपग्रहों के द्वारा टेलिविज़न प्रसारण से गांवों में शिक्षा का सुन्दर प्रसारण किया जा सकता है। आंधी, तूफ़ान और बाढ़ आदि की पूर्व सूचना उपग्रह से मिल सकती है। पृथ्वी में छुपी सपदा का ज्ञान भी ये उपग्रह आसानी से करा सकते हैं। टेलीविजन की बात हमें महाभारत की ओर ले जाती है। उस सुदूर काल में, कुरुक्षेत्र में होरहे युद्ध से बहुत दूर बैठे हुए संजय धृतराष्ट्र को युद्ध का पूरा व्यौरा देते हैं। संजयके पास कोई दूर दर्शन यंत्र था या उनकी आंखों को दूर दर्शन की शक्ति प्राप्त थी कहना कठिन है।

आज का युग औद्यौगीकरण का युग है।

औद्योगीकरण ने जहाँ एक ओर मानव के लिए अनेक प्रकार की सुविधायें एवं मनोरंजन के साधन प्रदान किये है वहां दूसरी ओर प्रदूषण एवं व्यवसायिक रोगों को पैदा करके नई समस्यायें भी खड़ी कर दी हैं। विश्व की बढ़ती हुई जन-संख्या और औद्योगीकरण के कारण एक अन्य संकट जो मुंह बाये खड़ा है ऊर्जा का संकट है। आज से ६०० मिलियन वर्ष पूर्व जिस गति से प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा पैट्रोलियम बना था आज का संसार उसे लाखों गुना तेज गति से खर्च कर रहा है। स्पष्ट है कि पेट्रोलियम को मात्रा तेजी के साथ कम होती जाएगी और इस का मूल्य बढ़ता चला जाएगा। पेट्रोलियम पृथ्वी में एक सीमित मात्रा में विद्यमान है। इस बात का अनुभव करते हुए आज पूरा विश्व इस बात को समझ रहा है कि वह समय भी आयेगा जब जीवाश्म ईंधन (पेट्रोलिय कोयला, आदि), जो कि वर्तमान में ऊर्जा का एक जबरदस्त स्रोत है समाप्त हो जाएगा। अतः भविष्य के लिए ऊर्जा के नये स्रोतों की खोज हो रही हैं। भविष्य में ऊर्जा का एक स्रोत न्यूक्लियर एनर्जी हो सकता है। सौर्य ऊर्जा की बात भी चल पड़ी है। एक अन्य असाधारण स्रोत जिसकी ओर हमारा ध्यान आकृष्ट हो रहा है हमारे जाने पहचाने पौधे हैं। कुछ ही समय पूर्व ब्राज़ील ने सारे विश्व का ध्यान अपनी ओर केन्द्रित किया। यह राष्ट्र प्रति वर्ष ४ हजार मिलियन डालर मूल्य का तेल आयात करता है। इस व्यय को ५० प्रतिशत कम किया जा सकता है यदि ब्राजील अपने कारों में गेसोलीन के स्थान पर एलकोहल प्रयोग करने लगे। वहाँ गन्ना और कसावा की खेती बड़े पैमाने पर की जाने की योजना है। इन पौधों से किण्वन द्वारा ईथेनाल बनाया जायेगा जिससे वहाँ की कारें चलेंगी। ब्राजील एक गर्म जलवायु वाला देश है और यहाँ खेती के लिए भूमि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। डा० जोस गोल्डेमबर्ग के अनुसार यदि ब्राजील वर्तमान की अपेक्षा तीन-प्रतिशत अधिक भूमि में गन्ने की फसल उगाने लगे तो इस शताब्दी के अन्त तक देश में याता-यात के लिए उपयोग होने वाला ईंधन देश के अन्दर ही पैदा होने लगेगा। भारत जहां की जल वायु इस प्रकार की फसल उगाने के लिये उप-युक्त है ब्राज़ील का अनुसरण करके यातायात के लिये ईंधन में आत्म निर्भर हो सकता है। इसी प्रकार कुछ अन्य देश भी हैं जो ब्राजील के उदाह-रण का लाभ उठा सकते हैं। अमेरिका भी, यद्यपि वहाँ की जलवायु ब्राज़ील से भिन्न है, इस दिशा में कदम बढ़ा चुका है। भूतपूर्व प्रेजीडेंट कार्टर के अनुसार अमेरिका १९८२ तक प्रतिवर्ष तीन सौ मिलियन गैलन ईथेनॉल का उत्पादन कर सकता है और १९८५ तक यह मात्रा तिगुनी हो जायेगी। किन्तु जो राष्ट्र प्रति वर्ष ११०००० मिलियन गैलन गैसोलीन खर्च करता हो उसके लिये उपरलिखित ईथेनॉल की मात्रा में वृद्धि कोई विशेष अन्तर नहीं लायेगी। फिर भी वहाँ पौधों से द्रव्य ईंधन निकालने के लिये प्रयत्न जारी हैं। गन्ना, चुकन्दर, मक्का, ज्वार, गेहूँ, एल्फेल्फा एवं समस्त प्रकार का जैव--कचरा (आरगैनिक वेस्ट) का उपयोग ईथेनॉल बनाने में हो सकता है। प्रोफेसर केलविन ने, जिन्हें १९६१ में प्रकाश संश्लेषण पर किये गये शोध कार्य पर नोबेल प्राइज़ मिला, एक ऐसे पौधे से तेल बनाने का दावा किया है जिसके पत्तों में लेटैक्स (दूध-एक सफेद सरल पदार्थ) होता है। केलविन के अनुसार इस पौधे से, जिसका नाम यूफ़ार्बिया लेथा इरिस है, प्रति हेक्टर पच्चीस बैरल तेल का

उत्पादन हो सकता है । प्रति बैरल मूल्य २० डालर पड़ेगा । इस पौधे के पत्तों को कुचल कर उनका लेटैक्स निकाला जाता है । इस लेटैक्स को एक विलायक में मिलाते हैं जिसके फलस्वरूप एक काले रंग का तेल जो बिल्कुल क्रूड ग्रायल की तरह होता है बनता है।

•

वर्तमान जगत की एक अन्य समस्या जो भयावय रूप से मानव सभ्यता को निगल जाने के लिये अपने पंजे बढ़ा रही है प्रदूषण की समस्या है । प्रत्येक व्यक्ति की पर्यावरण के प्रति सहनशीलता की निश्चित सीमाएं हैं और जब कोई कारक इन सीमाओं से अधिक मात्रा में उपस्थित होता है उसे प्रदूषण कहते हैं। इससे निपटने के लिये, वातावरण में इस विष वमन की प्रतिक्रिया को रोकने के लिये सभी देशों की सरकारें प्रयत्नशील है । इस विष को पीने के लिये भगवान शिव की तरह सबसे अधिक सफल माध्यम वृक्ष पाये गये हैं । इनकी पत्तियां वायु में मिले प्रदूषक पदार्थों के सूक्ष्म कणों को रोक और सोख लेती है । पत्थर के कोयले से उत्पन्न प्रदूषक रोकने के लिये जंगल जलेबी नामक वृक्ष का सघन रोपण बहुत लाभकारी पाया गया है। यह धुएं की सांद्रता में लगभग २७ प्रतिशत की कमी और सल्फर डाय ग्राक्साइ की सांद्रता में ८० प्रतिशत की कमी करने में समर्थ पाया गया । शक्तिचालित वाहन जैसे कारें, ट्रक एवं बसें भी प्रदूषण के स्रोत है । यदि सड़कों और मकानों के बीच १० मीटर चौड़ी तथा ६ मीटर ऊंची हरित पट्टिका का विकास किया जाये तो मार्गों से आने वाले कार्बन मोनो ग्राक्साइड की मात्रा में ४४ प्रतिशत कमी हो जाती है।

वायु के समान जल भी प्रदूषण से मुक्त नहीं है । कारखानों से निकलने वाले नाना प्रकार के प्रदूषक पदार्थ नदियों में प्रवाहित किये जाते हैं। इसीलिये कानपुर के निकट गंगा और कलकत्ता के निकट हुगली नदी प्रदूषण का शिकार है । इस समय भारत के १३ नगर जल प्रदूषण से ग्रस्त हैं । कारखानों से निकालने वाले अनेक ट्रेस एलीमेंट नदी के जल में प्रवाहित हो जाते हैं जिनमें से कुछ पौधों और जन्तुओं में मेटाबोलिक एरर पैदा कर देते है जिससे कई प्रकार के रोग हो जाते हैं जैसे कैंसर, हृदय रोग, स्नायु रोग एवं पेट के रोग ।

प्रदूषण के लिये प्रायः जन संख्या को उत्तरदायी माना जाता हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिये अधिक औद्योगीकरण किया जाता है जिससे प्रदूषण में वृद्धि होती है। किन्तु आज हम देखते हैं कि अनेक विकसित देशों में जन संख्या कम होने पर भी प्रदूषण अधिक जनसंख्या वाले देशों की तुलना में अधिक है क्योंकि वहाँ प्रति व्यक्ति आवश्यकता अधिक है । अतः वास्तविक दोष तृष्णा का है । शायद इसी लिये हमारे वैदिक ऋषियों ने **'इदन्नमम'** को इतना महत्व दिया है ।

प्रदूषण को कम करने के अतिरिक्त पौधों का वातावरण संरक्षण में भी अत्यधिक महत्व है । वृक्षों का बेहिसाब काटा जाना, जंगल के जंगल, साफ कर देना प्रकृति में असंतुलन पैदा कर देता है । इसके दूर गामी परिणाम होते हैं—भूमि का अपरदन प्रारम्भ हो जाता है, भूमि कृषि के अयोग्य हो जाती है तापनियंत्रण एवं जलचक्र नियन्त्रण बिगड़ जाता है, जन्तु जीवन के प्राकृ-

तिक निवास एवं वन संपदा नष्ट हो जाते हैं। प्रत्यक्ष है कि वातावरण संरक्षण और वृक्षों का गहरा सम्बन्ध है। 'रक्षया प्रकृति पातु लौका: ।' ब्रह्मोद्धिपनिषद का यह वाक्य मनुष्य को सदैव याद रखना पड़ेगा अन्यथा विनाश का वह मार्ग जिस पर वह चल पड़ा है उसे कहीं का नहीं छोड़ेगा। वनस्पतियों की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुये वृक्षारोपण के अभियान को निरतंर चालू रखना अत्यावश्यक है। भूमि पर कृषि के बढ़ते हुये दबाव को सीमित रखने के लिये क्या यह ठीक नहीं होगा कि हम अनेक प्रकार के खाद्य कुकरमुत्तों (मारशेला, प्लोरोटिस, (ढींगरी) बटनमशरुम, पैडी स्ट्रा मशरुम आदि) को वनस्पति कूड़ा-कचरा (गेहूं का भूसा, चोकर) पर उगायें।

एक अन्य वैज्ञानिक क्षेत्र जिसने मनुष्य को चौंका दिया है 'जैनेटिक इञ्जीनियरिंग' है। ऐसा विचार है कि भविष्य में इस विज्ञान के द्वारा मनचाहे एवं पूर्व निश्चित किये गये गुण एवं सेक्सवाले व्यक्ति पैदा किये जा सकेंगे और वह भी बिना यौन सम्बन्ध के। अनेक प्रकार की आनुवांशिक बीमारियों की रोकथाम में भी यह विज्ञान कारगर सिद्ध होगा। एक दूरगामी सम्भावना यह भी है कि यदि किसी दुर्घटना में किसी व्यक्ति का कोई अंग खराब होता है या टूट जाता है तो वह अंग फिर से शरीर में अपने स्थान पर निर्मित किया जा सकेगा या फिर प्रयोगशाला में निर्मित हो रहे मानव अंग को शरीर के क्षत हुये अंग के स्थान पर लगा दिया जाये।

ऊपर जिन विषयों की चर्चा संकेत मात्र की गई है उनमें से कुछ पर इस अंक में लेख प्रकाशित किये जा रहे है। आशा है ये जानकारी पाठकों के लिये उपयोगी सिद्ध होगी।

—डॉ० विजय शंकर

* * *
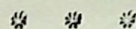
वेद और विज्ञान

—प्रो० सुरेशचन्द्र त्यागी

वेद और विज्ञान कुछ लोगों को आपस में एक दूसरे के विरोधी प्रतीत होते हैं, परन्तु यह धारणा गलत है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है और यह सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। इस बात की घोषणा वर्तमान युग के महान आचार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती ने की। अनेक ज्ञान-विज्ञानों का वेद के मंत्रों में भंडार भरा पड़ा है। वेद धर्म पुस्तक है, परन्तु वैसी धर्म पुस्तक नहीं जो सृष्टि के नियम के विरुद्ध मनघड़न्त बातों और चमत्कारों आदि से भरी पड़ी हो। धर्म और विज्ञान वेदों में साथ-साथ चलते हैं। **परन्तु जब धर्म विज्ञान से विहीन होगा तो अन्धविश्वास को जन्म देगा और जब विज्ञान धर्म से विहीन होगा तो पाशविकता बनकर विनाश की ओर अग्रसर होगा** अतः **धर्म और विज्ञान में समन्वय होना आवश्यक** है।

वेद के विषय चार है। विज्ञान, कर्म, उपासना और ज्ञान। इन सब में विज्ञान मुख्य है, क्योंकि उसमें परमेश्वर से लेकर तृण तक सब पदार्थों का साक्षात् बोध होता है।

अन्धविश्वास और अल्पज्ञता के कारण धर्म और विज्ञान में विरोध रहा है। इसाईयत तथा इस्लाम ने विज्ञान को अपना शत्रु समझा। गैलिलितो कहता था कि पृथ्वी गोल है और घूमती है। इसाई पृथ्वी को चपटी और स्थिर मानते थे। ईसाइयत ने गैलिलियो को जेलमें डाल दिया। ब्रूनो कहता था कि विश्व का केन्द्र सूर्य है और ग्रह उपग्रह उसके चारों ओर घूमते है। इस बात पर उसे जला दिया गया। इस्लाम ने भी अंधविश्वास में पड़कर विज्ञान पर कई प्रहार किये। ईसाइयत और इस्लाम ने ही नहीं अपितु बहुत से अन्य अन्धविश्वासी मतावलम्बिओं ने विज्ञान को अपना शत्रु समझा।

वेदों में विज्ञान है, परन्तु यदि हम उसे खोजेंगे नहीं तो हमारी हालत उस गधे के समान होगी जिसकी पीठ पर चन्दन की लकड़ियों का गट्ठर लदा हुआ है, परन्तु उस गरीब को इसके मूल्य का कुछ पता ही नहीं और वह बोझ समझ कर जीवनभर इस बोझ को ढोता रहता।

एक वैज्ञानिक भी महान् तपस्वी और योगी है। बिना कठोर परिश्रम और तप के वैज्ञानिक खोजे नहीं की जा सकती। वैज्ञानिकों ने लगातार कई२ रातें जागकर चन्द्रमा और तारों स्थिति की और पृथ्वी पर उनके प्रभाव का पता लगाया। इस प्रकार ज्योतिष विद्या को जन्म दिया। चन्द्रमा आदि ग्रहों पर मानव का पहुंचना, रेडियों, टेलीविज़न, हवाई जहाज, एटम बम, हाईड्रोजन बम, पनडुब्बी, टैंक, आदि का आविष्कार वैज्ञानिकों की महान तपस्या का ही तो फल है। आज ये आविष्कार हमें खेल से प्रतीत होते है। बिजली,

रेल, मोटर, कार, टयूबवैल, बीमारियों के जांच करने के तथा उनको नियन्त्रित करने के सैकड़ों आविष्कारों की तो कोई विशेष गणना ही नहीं रही।

आज दुनियां बहुत तेजी से बदल रही है यदि भारतवर्ष कदम से कदम मिलाकर वैज्ञानिक क्षेत्र में और देशों के साथ न चला तो हमारा हाल वही होगा जो कि सोमनाथ के मन्दिर पर महमूद गजनवी के आक्रमण के समय हुआ था।

वेदों के ज्ञान भंडार से हम मानवता के लिए उपयोगी विज्ञान की खोज करें तब ही हम आर्य-समाज और महर्षि दयानन्द के सच्चे भक्त कहलाने के अधिकारी होंगे।

वेदों में विज्ञान की खोज की भावना को जगाने के लिए गुरुकुल कांगड़ी का विज्ञान महा-विद्यालय आर्यभट्ट पत्रिका को निकाल रहा है। और इसी के साथ १० अप्रैल सो साईंस प्रदर्शनी का आयोजन कर रहा।

गुरुकुल विश्वविद्यालय के कुलपयि श्री बल-भद्रकुमार हूजा श्री गोवर्धन जी के सुपुत्र हैं और आर्यभट्ट उपग्रह के डायरैक्टर श्री सतीश धवन के बहनोई हैं जिन्हें इस वर्ष गणतन्त्र दिवसपर राष्ट्र-पति महोदय ने पद्मविभूषण की उपाधि से अलंकृत किया है। श्रीबलभद्रकुमार जी के पूज्य पिता स्व-र्गीय गोवर्धन जी हुतात्मा स्वामो श्रद्धानन्द जी के समय में गुरुकुल कांगड़ी गंगापार, में हैडमास्टर थे। उन्होंने सबसे हहले फिजिक्स कौर कैमिस्ट्री में हिन्दी भाषा में छात्रों के लिए पुस्तकें लिखी थीं। अतः श्री कुलपति जी की यह अभिलाषा थी कि 'आर्यभट्ट' पत्रिका हिन्दी में ही निकले जिससे प्रत्येक भारतीय इसे पढ़ सके और मातृ-भाषा के गौरव को अनुभव कर सके उनकी प्रेरणा तथा प्रोत्साहन से आर्यभट्ट पत्रिका का यह प्रथम अंक आर्यजगत् को समर्पित है इस आशा और भावना के साथ कि हे आर्यजगत् 'उत्तिष्ठत, जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत' : उठो जागो, और श्रेष्ठ तपस्वी मनीषियों के मार्ग का अनुसरण करके आगे बढ़ो और देश को बढ़ाओ।

आज मानव जीवन का प्रत्येक क्षेत्र विज्ञान और गणित से प्रभावित है। किसी देश की समृद्धि इस बात पर निर्भर करती है कि वह विज्ञान के क्षेत्र में कहां खड़ा है। आज जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जहा गणित का प्रवेश न हो, परन्तु विज्ञान तो गणित के बिना एक कदम आगे नहीं बढ़ सकता।

मानव जाति का इतिहास लाखों वर्ष पुराना है। मनुष्य ने कब से गणित का प्रयोग आरम्भ किया यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता तथापि यह निश्चित है कि मानव जाति में अंकों का प्रयोग अति प्राचीन है। भारत में गिनती के लिए प्राचीन शब्द 'गणन' है और इसी शब्द से गणित निकला है। गणित का मौलिक अर्थ है गणन किया हुआ अर्थात् गिना हुआ।

अंकगणित के इतिहास में चार देशों के नाम उल्लेखनीय है—भारत, चीन, मैसोपोटियामा और मिस्र। आधुनिक गणित की नींव हिन्दुओं ने डाली है। हिन्दू अंकगणित का प्रभाव चीनियों और अरबों पर भी पड़ा। भारत के कुछ प्रसिद्ध प्राचीन गणितज्ञ भास्कर, आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त और वराह मिहिर हुए है।

सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वर्णन किया है कि चारों वेद ईश्वरकृत है। सृष्टि के प्रारम्भ में परमात्मा ने मनुष्यों की भलाई के लिए अग्नि, वायु, आदित्य तथा अङ्गिरा ऋषियों को क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेद का ज्ञान दिया। इस प्रकार सिद्ध होता है कि वेद ईश्वरकृत है। आर्य-समाज के दस नियम हैं। इसमें प्रथम नियम कहता है कि सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदिमूल परमेश्वर है। तीसरा नियम कहता है कि "वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है; वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

अब आइये और देखिये कि किसप्रकार सृष्टि के आदि में ईश्वर ने गणित का ज्ञान ऋषियों को दिया था।

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ता च्छुक्रमुच्चरत।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम
शरदः शत प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः
स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।
(यजुर्वेद ३६।२४)

यह यजुर्वेद का मत्र है जिनका भावार्थ है:— हे सबके चक्षु प्रभो आप अनादिकाल से विद्वानों और संसार के सब प्राणियों के हित के लिए सदा रहने वाले हो। हम आपकी कृपा से प्रभो सौ वर्ष देखें सौ वर्ष जियें। सौ वर्ष सुनें, सौ वर्ष बोलें। सौ वर्ष तक किसी के आधानी न रहें। उसी ईश्वर की कृपा से हम लोग सौ वर्ष के बाद भी देखें, जीवें, सुनें और स्वतन्त्र रहें।

इस मन्त्र में शतम् शब्द से स्पष्ट है कि गणित का ज्ञान सृष्टि के प्रारम्भ से ही आर्य लोगों को था।

इसी प्रकार वेदों के अन्य मंत्रों में भी स्थान २ पर गणना वाचक शब्द आये हैं जिससे यह ध्रुव सत्य प्रमाणित होता हैं कि गणित का ज्ञान अति प्राचीन है।

"ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना" मंत्र में कहा है कि—

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक
इंद्राजा जगतो बभूव।
य ईश अस्य द्विपदश्चतुष्पदः
कस्मै देवाय हविषा विधेम।

[यजुर्वेद २३ ३७]

इस मंत्र में एक, द्विपदः और चतुष्पदः संख्याओं को प्रकट करते है।

जगत् की उत्पत्ति और वेदों के प्रकाश के आने में इन ग्यारह गुणों से सम्पन्न व्यक्ति ही गणित को सीख सकता है और उसका आनन्द उठा सकता है। हमारे देश के प्राचीन गणितज्ञ आर्यभट्ट गणित के एक प्रसिद्ध विद्वान् हुए है। परन्तु विरले लोग ही उनके जीवन से परिचित हैं। महान् गणितज्ञ आर्यभट्ट की याद में भारतवर्ष ने १९ अप्रैल १९७५ ई० को अपना प्रथम उप-ग्रह 'आर्यभट्ट' अन्तरिक्ष में छोड़ा। इसने ३० हजार कि० मी० प्रति घंटे की गति से पृथ्वी की परिक्रमा की।

आर्यभट्ट का जन्म पटना के पास कुसुमपुर में ४७६ ई० में हुआ था। इनके तीन ग्रन्थों का पता चलता है—दशगीतिका, आर्यभटीयं और तन्त्र।

इनमें से आर्यभटीयं ही सबसे प्रसिद्ध पुस्तक है। पहली दोनों पुस्तकों की पाण्डुलिपियां का पता सर्वप्रथम भाभाउदा जी ने १८६४ ई० में चलाया था। तीसरे ग्रन्थ के नाम के अतिरिक्त कुछ पता नहीं चल पाया है। आर्यभटीयम् श्लोकों में लिखी गई है। पुस्तक में पांच अध्याय हैं जिनमें से केवल एक गणित पर है शेष ज्योतिष पर हैं। उक्त एक अध्याय में आर्यभट्ट ने अंकगणित, बीजगणित, ज्योतिष और त्रिकोणमिति के ३३ सूत्र दिये है।

आर्यभटीयं के प्रथम भाग का नाम दशगीतिका है जिसमें ज्योतिषीय सारणियां दी गई है। दूसरे भाग को आर्यष्तशत कहते है। इसमें तीन अध्याय हैं–गणित, कालक्रिया और गोल। गणित के प्रारम्भ में कुछ ज्योतिष परिभाषायें दी गई है। तत्पश्चात् वर्गमूल निकालने का सूत्र आता है। आर्यभट्ट ने अपने ग्रन्थ के कई अनुच्छेदों में ज्यामितीय विषयों का विवेचन किया है। इसमें मुख्यतः त्रिभुजों, चतुर्भुजों और बृत्तों के क्षेत्रफलों और दोनों के आयतन के सूत्र दिये हैं। आर्यभट्ट नें आधुनिक बीजगणित की नींव डालने में भी महान् योगदान दिया है। एक अरब, छियानवे करोड़ कई लाख और कई हजार वर्ष गुजर चुके है। इस प्रकार गणित विषय की उत्पत्ति को भी इतने ही वर्ष व्यतीत हो चुके है।

गणित नित्य है, शाश्वत है इसके बिना सृष्टि चल ही नहीं सकती। ग्रह और उपग्रह अपनी धुरी पर, अपने मार्ग पर सूक्ष्म से सूक्ष्म गणना के आधार पर अरबों वर्षों से चल रहे है। सूर्य, चन्द्रमा और तारों का नियमित विचरण गणित का ही चमत्कार है। फिज़िक्स, कैमिस्ट्री ज्योतिषविद्या, सांख्यिकि, इतिहास, विज्ञान और भूगोल की आत्मा गणित है। 'पवित्रता गणित का रुधिर है और शुद्धता इसके प्राण हैं। अधिकतर छात्र गणित के नाम को सुनकर कांप जाते हैं। गणित को पढ़ने के लिए उसे सीखने के लिए घोर तपस्या करनी पड़ती है। भाषण बाज़ी या आयाराम गयाराम की राजनीति से यहां काम नहीं चलता। गणित को अंग्रेजी भाषा में मैथेमैटिक्स MATHEMATICS कहते है। इसमें ग्यारह अक्षर है। इसमें से प्रत्येक अक्षर गणित सीखने के इच्छुक छात्र का पथप्रदर्शन करता है। यदि गणित सीखना चाहते हो तो आओ एक एक अक्षर के सागर में से सागर को भरो।

M—Memony – याददाश्त (स्मृति)
A—Attention सावधान
T—Talents – असाधारण बुद्धि
H – Hand Labour – कठोर परिश्रम
E – Enthusiasm – उत्साह
M—Mental Power – मानसिक शक्ति
A – Abiliby – योग्यता
T – Tacts – चतुरता
I – Intelligence – बुद्धि, शीघ्र ग्राहिता
C – Cleverness – कुशलता
S—Smile – मुस्कान

* * *

जिन पर हमें गर्व है :

प्रो० हरिशचन्द्र

अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन के अध्यक्ष प्रो० सतीश धवन

(जिन्होंने आर्यभट्ट की नीव से उड़ान तक उच्च कोटि का मार्ग दर्शन दिया)

जन्म स्थान—

भारत की साहसिक युवा पीढ़ी के निष्ठावान् वैज्ञानिक प्रो० सतीश धवन का जन्म २५ सितम्बर १९२० को श्रीनगर कश्मीर में हुआ।

बाल्यकाल एव शिक्षा—

सन् १९३९ में राजकीय विद्यालय लुधियाना एवं लाहौर में गणित एवं भौतिकी विषय लेकर स्नातक, १९४१ में पंजाब विश्वविद्यालय चंडीगढ़ से अंग्रेजी विषय लेकर एम. ए. तथा १९४४ में मैकेनिकल इञ्जीनियरिंग की उपाधि प्रथम श्रेणी में प्राप्त की। एरोनाटिकल इञ्जीनियरिंग की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए भारत सरकार से छात्रवृति लेकर अमेरिका के 'मिनेसोटा' विश्वविद्यालय में १९४६-४७ तक अध्ययन किया। १९४९ में एयरोडायमिक्स का विशेष अध्ययन करके एयरोनाटिकल इञ्जीनियर्स तथा १९५१ में एयरोनाटिक्स एवं गणित में पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त की।

कार्य क्षेत्र

सन् १९५१ में अमेरिका से भारत लौटने पर सर्व प्रथम भारतीय विज्ञान संस्थान बंगलौर के एयरोनाटिकल इञ्जीनियरिंग विभाग में वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, सन् १९५२-५५ तक असिस्टैण्ट प्रोफेसर, सन् १९५५-६२ तक अध्यक्ष तथा सन् १९६३ से भारतीय विज्ञान संस्थान के निदेशक के रूप में कार्य किया।

आपने अनेक रिसर्च पेपर लिखे हैं जिन में तरल पदार्थ की यांत्रिकी और एयरोनाटिकल इञ्जीनियरिंग विशेषकर तीव्रगति वाली समस्याओं, सीमा सतह, ट्रान्सोनिक तथा सुपरसोनिक सुरंगों, क्षुब्धता, संक्रमण प्रपंच आदि की जानकारी से अवगत कर या है।

आप रायल एरोनाटिकल सोसायटी एवं भारतीय विज्ञान अकादमी के फ़ेलो, भारतीय एयरोनाटिकल सोसायटी, फिज़िकल रिसर्च लैबोरेटरी मैनेजमेंट कौंसिल, इण्डियन नेशनल कमेटी स्पेस रिसर्च, एटामिक एनर्जी कमीशन, बोर्ड आफ पोस्ट ग्रेजुएट इञ्जीनियरिंग एण्ड रिसर्च आफ आल इण्डिया कौंसिल फार टेक्निकल एजूकेशन तथा इण्डो-सोवियत ज्वाइन्ट कमेटी फार साइंटिफिक क्वापरेशन के सदस्य हैं।

१० मई १९७२ को भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन और सोवियत अकादमी आफ़ सांइसेस के बीच आर्य भट्ट के प्रक्षेपण के समझौते पर हस्ताक्षर हुए और इसी वर्ष उपग्रह निर्माण का कार्य बंगलौर में भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन के अध्यक्ष होने के नाते आपकी देख-रेख में प्रारम्भ हुआ। उपग्रह आर्य भट्ट के प्रक्षेपण कार्य में दत्तचित हो गये।

सन् १९७३ में पहला रोहिणी राकेट छोड़ा गया और एक वर्ष बाद भारत और सोवियत संघ में माडल उपग्रह का परीक्षण किया गया। दो महींने बाद परीक्षण माडल को सोवियत संघ ले जाया गया।

आर्य भट्ट की उपलब्धियों से प्रेरणा लेकर अधिक परिश्रम के बाद आपके नेतृत्व में वैज्ञानिकों ने आर्य भट्ट नामक उपग्रह दिवंगत आर्यभट्ट की जन्म शताब्दि पर प्रक्षेपण कर १९ अप्रैल १९७५ को आर्य भट्ट को सदा-सदा के लिए अमर कर दिया। उसी दिन भारतीय उपग्रह आर्य भट्ट ने लगभग ३० हजार किलोमीटर प्रति घण्टे को गति से परिक्रमा करना प्रारम्भ कर दिया।

यह सफलता भारत सोवियत मैत्री का ही फल है। जिस पर न केवल उक्त दो राष्ट्र ही प्रसन्न हैं अपितु विश्व आनन्दित हो उठा। इस महान कार्य के इतने शीघ्र सम्पन्न करने का श्रेय भारतीय अन्तरिक्ष शोध संगठन के अध्यक्ष प्रो० सतीश धवन को है।

आप को भारत के राष्ट्रपति ने सन् १९६६ में पद्म श्री एवं १९७१ में पद्म भूषण तथा २८ मार्च १९८१ को पद्म विभूषण से विभूषित किया।

* * *

वैदिक काल में वनस्पति विज्ञान क्षेत्र में सराहनीय प्रगति दृष्टिगोचर होती है। पौधों के वर्गीकरण, वाह्य तथा आंतरिक रचना, क्रिया विज्ञान तथा विकास का वर्णन वैदिक साहित्य में मिलता है। ऋग्वेद में प्रकाशसंश्लेषण की ओर भी संकेत किया गया है। ऐसे प्रमाण मिलते है जिनसे पता लगता है कि उस काल के लोग भूमि को अधिक उपजाऊ बनाने के लिए फसलों का हेर फेर करते तथा खाद डालते थे। उस दूरस्थ समय में भी इस प्रकार के अध्ययन तथा तर्कणाप्रधान चिन्तन के लिए कोई भी हमारे पूर्वजों की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता।

विज्ञान भी धर्म है

—डॉ० गंगाराम गर्ग

प्राय: ऐसा माना जाता है कि विज्ञान और धर्म एक दूसरे के विरोधी हैं। यह अकसर सुनने का मिलता है कि वैज्ञानिक प्रगति और उसके द्वारा प्राप्त भौतिक समृद्धि ने मनुष्य को धर्म से विमुख कर दिया है। पर यदि थोड़ी-सी गम्भीरता से विचार करें तो प्रतीत होगा कि जो कार्य धर्म करता आया है और अब कर रहा है विज्ञान भी वही कार्य कर रहा है।

हम धर्म द्वारा ईश्वर के स्वरूप और उसके गुणों को जानने का प्रयत्न करते हैं। हमारे धार्मिक ग्रन्थों में ईश्वर की एक ऐसे विराट् पुरुष के रूप में कल्पना की गई है, जो इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पर आच्छादित है। हमारे दार्शनिकों ने अपनी अलौकिक प्रतिभा और कल्पना का परिचय दिया है और ईश्वर के सम्बन्ध में हमारे चिन्तन को इस सीमा तक पहुंचा दिया है कि कई बार तो ऐसा लगता है कि उससे आगे सोचने को रहा कुछ नहीं है। अब यह देखिए कि प्रयोगशाला में बैठा वैज्ञानिक क्या करता है। वस्तुत: हम कितनी भी कल्पना करें और कितना भी चिन्तन करें हम ईश्वर के सही स्वरूप को नहीं समझ सकते, क्योंकि कल्पना से वास्तविकता बड़ी होती है। हमने हाथी नहीं देखा पर कल्पना की कि हाथी एक विशालकाय जानवर है, पर हाथी देखने पर ही हमारा ज्ञान परिपूर्ण होता है। ईश्वर के सम्बन्ध में भी हमें कल्पना से नहीं बल्कि वास्तविकता से काम लेना चाहिए। आज हमारे बीच कालिदास, शेक्सपियर, महर्षि दयानन्द सरस्वती और महात्मा गांधी नहीं हैं। यदि हम यह जानना चाहते हैं कि ये महापुरुष कैसे थे, तो हमारे पास एक ही मार्ग है कि हम उनकी रचनाओं को पढ़ें और उनके स्वरूप को समझें। इसके अतिरिक्त हमारे पास कोई दूसरा मार्ग नहीं है। ईश्वर को हम अपनी भौतिक आँखों से नहीं देख सकते। हमारे सामने ईश्वर द्वारा रचित सृष्टि है, जिसे हम देख रहे हैं। ऐसी अवस्था में ईश्वर को समझने का यही एक मार्ग है कि हम उसकी सृष्टि को समझें। उसको समझे बिना हम ईश्वर के स्वरूप को नहीं समझ सकते। कल्पना हमारी सहायक हो सकती है पर उससे बड़ी वास्तविकता है जो हमें निश्चित मार्ग पर ले जा सकती है। प्रयोगशाला में बैठा वैज्ञानिक जब अपनी खुर्दबीन या दूरबीन से क्षुद्र से क्षुद्र और दूर से दूर संसार को देखता है, वह भी तो उस ईश्वर द्वारा रचित सृष्टि को निहार रहा है। वह देखकर चौंक उठता है और उसके मुख से निकल जाता है कि ईश्वर तू कितना महान् है। वस्तुत: वैज्ञानिक कल्पना के आधार पर नहीं, बल्कि वास्तविकता के आधार पर ईश्वर की खोज कर रहा है। इस दृष्टि से दार्शनिक, भक्त और वैज्ञानिक में कोई अन्तर नहीं है। सभी उस प्रभु के स्वरूप का चिन्तन कर रहे हैं। बल्कि एक दृष्टि से तो वैज्ञानिक का स्तर दार्शनिक और भक्त से ऊँचा है क्योंकि उसका आधार कल्पना नही वास्तविकता है। जब एक वनस्पति विज्ञान का पंडित

किसी पौधे की रचना देखता है कि किस प्रकार पौधा जल, वायु और मिट्टी से भोजन लेता है कि और कितने छोटे-छोटे तन्तु उसमें कार्य कर रहे हैं, तो वह उस ईश्वर को महानतम वैज्ञानिक समझने लगता है। यही आधार दूरबीन से देखने वाले वैज्ञानिक का है, जो अरबों खरबों आकाश गंगाओं को देखकर उस प्रभु के महान स्वरूप की कल्पना करता है। एक दार्शनिक या भक्त की अपेक्षा वैज्ञानिक का सृष्टिकर्ता के प्रति प्रेम अधिक पुष्ट हैं क्योकि उसने अपनी आंखों से उस प्रभु की विचित्र लीला को देखा है। हम प्रायः भजन गाते हैं कि ईश्वर तू महान है। तूने भांति-भांति के फूल बनाये। फूलों में तूने गंध डाली है। सूर्य और चद्रमा को चमक प्रदान की। यह तो भक्ति है, जो धर्म का आवश्यक अंग है, पर जो व्यक्ति इस बात की खोज कर रहा है कि ये भांति-भांति के फूल कैसे बन गये, और फूलों में गंध कहां से आ गई और यह सूर्य में चमक कहां से आ गई, वह और भी बड़ा भक्त है।

इस सम्बन्ध में आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द का दृष्टिकोण भी विचारणीय है। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के चतुर्थ अध्याय में वेदों में कौन-कौन से विषय किस-किस प्रकार के हैं, इस विषय पर महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि वैसे तो वेदों में अवयव विषय अनेक हैं, परन्तु उन में से चार प्रमुख हैं:— १- विज्ञान अर्थात् सब प्रकार के पदार्थों का यथार्थ जानना। २- कर्म, ३- उपासना और ४-ज्ञान।

विज्ञान उसको कहते हैं कि जो कर्म, उपासना और ज्ञान इन तीनों से यथावत् उपयोग लेना और परमेश्वर से लेकर तृण पर्यन्त पदार्थों का साक्षातबोध होना उससे यथावत् उपयोग का करना। इससे यह विषय इन चारों में प्रधान है। विज्ञान के भी महर्षि ने दो भाग किये हैं। एक तो ईश्वर का यथावत् ज्ञान और उसकी आज्ञा का बराबर पालन करना और दूसरा यह है कि उस के रचे हुए सब पदार्थों के गुणों का यथावत् विचार करके उनसे कार्य सिद्ध करना अर्थात् ईश्वर ने कौन-कौन पदार्थ किस-किस प्रयोग के लिए रचे हैं। अतः महर्षि ने ज्ञान, कर्म और उपासना को विज्ञान की प्राप्ति के लिए साधन माना है और विज्ञान के अन्तर्गत पहले सृष्टि का ज्ञान और फिर सृष्टिकर्ता का ज्ञान माना है। इस प्रकार विज्ञान और धर्म को विज्ञान' के ही अन्तर्गत माना है।

दीन-दुखियों की सेवा करना, निर्धनों की सहायता करना यह भी धर्म का अंग माना जाता है। लोग तालाब खुदवाते हैं, प्याऊ बैठाते हैं, भूखों को अन्न वितरित करते हैं, क्योंकि इससे पुण्य की प्राप्ति मानी गई है। यदि विज्ञान की सहायता से हम दरिद्रता को दूर कर सकें तो क्या यह भो धर्म का एक अग नहीं माना जाएगा? बिजली ने लोगों को कितने आराम पहुँचाये हैं और यदि बिजली चली जाये तो कितना कष्ट होता है। अमरीका, रूस आदि पाश्चात्य देशों ने विज्ञान के बल पर ही अपनी निर्धनता को दूर किया है और वे संसार के शिखर पर पहुंच गये हैं। विज्ञान की सहायता से बड़े-बड़े भयंकर रोगों को दूर किया जा रहा है। क्या यह सब कुछ धर्म नहीं है? साथ ही जो सुविधाएं आज विज्ञान ने मनुष्य को प्रदान की हैं, वे इतनी हैं कि उनकी गणना नहीं की जा सकती है। पहले एक जुलाहा अपने दो हाथों से बहुत थोड़ा कपड़ा बुन पाता था पर अब मशीन की सहायता से उसकी आय काफी बढ़ गई है। विज्ञान की सहायता से यह

प्रगति प्रत्येक दिशा में दिखाई दे रही है। हमारी निर्धनता का मूल कारण यह है कि सीमित ऊर्जा के कारण हम उत्पादन उतना नहीं कर पाते कि हम प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार दे सकें। विज्ञान ऐसी खोज में प्रयत्नशील है जबकि आपको मनचाही ऊर्जा मिल सकेगी और उत्पादन भी लगभग असीमित हो जायेगा। निर्धनता समाप्त हो जायेगी। यह भी एक महान धर्म है।

अभी तक हमारी शक्तियाँ इस पर लगी रहती हैं कि हम किस प्रकार अपना और अपने परिवार का पालन पोषण कर सकें। विज्ञान को सहायता से हमारी भौतिक आवश्यकताए थोड़ी देर ही कार्य करके पूरी हो जायेंगी और शेष समय हम ललित कलाओं के अध्ययन में या अनुसंधान में लगा सकते हैं। यदि ऐसी स्थिति आ जाए तो एक ही वर्ष में हम इतनी उपलब्धियां प्राप्त कर सकेंगे, जो हमें सैकड़ों वर्षों में अब प्राप्त होती हैं।

हमारा सम्पूर्ण प्राचीन साहित्य विज्ञान की आधारशिला पर स्थित है। वस्तुतः प्राचीन समय में विज्ञान और धर्म में अन्तर था ही नहीं। महर्षि दयानन्द ने वेदों का भाष्य लिखने से पूर्व चतुर्वेद विषय सूची बनाई थी। इस सूची को देखने से पता चलता है कि लगभग ७० प्रतिशत मन्त्र विज्ञान-परक भी हैं। वेद हमारे धर्म के स्रोत हैं और जब उनके अधिकांश मन्त्र विज्ञान-परक हैं तो विज्ञान और धर्म में अन्तर क्यों? रामायणकाल में भी विज्ञान ने काफी उन्नति कर ली थी। पुष्पक विमान का तो स्पष्ट उल्लेख है, जिसमें बैठकर राम लंका से अयोध्या लौटे थे। दण्डकारण्य में राम लक्ष्मण को ले जाते समय विश्वामित्र ने राम को ५५ प्रकार के अस्त्र-शस्त्र प्रदान किये थे। महाभारत युद्ध में कितने भयंकर अस्त्रों का प्रयोग हुआ है, यह सब जानते हैं। भागवत में शाल्व राजा के उस विमान का उल्लेख है, जो भूमि, आकाश, जल और पहाड़ों पर भी आसानी से चल सकता था भरद्वाज ऋषि की अंशुबोधनी नामक पुस्तक में अनेक विद्याओं के लिए एक-एक अधिकरण हैं। विमान अधिकरण से वायुयान का बिजली, वायु, अग्नि, सूर्य-किरणों, चुम्बक आदि आठ पदार्थों से चलने का पता लगता है। ये वायुयान दूर-दूर के ग्रहों और लोकों में भी जाते थे। हिन्दू पुराण शास्त्रों में विष्णु का वाहन गरुड़ माना है। इसका केवल यह अर्थ है कि विष्णु गरुड़ के आकार के विमान पर यात्रा करते थे। इसी प्रकार गणेश का वाहन चूहा है। इसका भी यही अर्थ है कि गणेश का वाहन चूहे के आकार का था। हमने वैज्ञानिक अनुसधान कर्ताओं को भी ऋषि माना है। 'अंशुबोधनी' के लेखक भरद्वाज को हमने ऋषि माना है। कहा जाता है कि ऋषि भरद्वाज की एक बड़ी भारी प्रयोगशाला थी, जो कि इलाहाबाद के पास थी। आज के युग में आइंस्टाइन, रमन और सतीश धवन भी ऋषि हैं।

आज का और आने वाला युग ऊर्जा के बिना नहीं टिक सकता। मनुष्य जब अपने हाथों से कार्य करता है, तो वह शारीरिक ऊर्जा का प्रयोग करता है। जब वह मशीन पर कार्य करता है, तो मशीन भी किसी ऊर्जा के सहारे चलती है। सब को पता है कि पैट्रोल और कोयले के भंडार सीमित हैं। पैट्रोल तो इस शताब्दी के बाद समाप्त सा हो जायेगा। कोयले के भंडार सैकड़ों वर्ष चल सकते हैं पर ये दोनों पदार्थ वायु-प्रदूषण पैदा करते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि हम इस प्रकार की ऊर्जा का पता लगायें, जो

वायु-प्रदूषण भी न करे और कम लागत पर पर्याप्त मात्रा में मिलती रहे। वायु, जल समुद्र की लहरों, भूगर्भ, अग्नि, और सूर्य की गर्मी से ऊर्जा पैदा की जा सकती है। सूर्य की गर्मी से इस पृथ्वी पर जीवन है पर इसका ईंधन समाप्त होने में नहीं आ रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि हम सूर्य के निरन्तर जलते हुए रहस्य को समझें और फिर असीमित ऊर्जा प्राप्त करें ताकि हम अपनी निर्धनता को पूर्णतः समाप्त करके इस पृथ्वी को स्वर्ग बना सकें। काम बहुत बड़ा है पर विज्ञान की उपलब्धि के बाहर नहीं है। क्या भारत का या किसी और देश का वैज्ञानिक इस ओर प्रयत्न कर सकेगा? भले ही हमें एकदम सफलता न प्राप्त हो पर धीरे-धीरे हम उस ओर अवश्य पहुंच जायेंगे जहां हम पृथ्वी पर से ऊर्जा की समस्या को सदा के लिए सताप्त कर सकें। इस ससय न तो पर्याप्त बिजली है, न डीजल है और न पैट्रोल। सभी चीजों की कमी है। ऊर्जा के स्थायी स्रोत के पता लगने पर पृथ्वी पर ही वह स्वर्ग आ जायेगा जिसकी लाखों वर्षों से मनुष्य स्वप्न लेते आ रहा है। विज्ञान धर्म ही नहीं बल्कि परम धर्म है। विज्ञान की असाधारण प्रगति को देखकर आशंका हो जाती है कि मनुष्य जाति भयंकर अस्त्रों से अपना अस्तित्व ही कहीं समाप्त न कर ले। यहां पर फिर हमें विज्ञान से ही शिक्षा मिल सकती है। इस ब्रह्माण्ड में अरबों-खरबों लोक हैं और एक-एक लोक का घेरा करोड़ों मील है पर वे आपस में टकरा कर अपना सर्वनाश नहीं कर लेते। सहअस्तित्व की भावना का हमें अपने मनों में विकास करना होगा। वैदिक धर्म का सार यह है कि मनुष्य इस संसार में ईश्वर द्वारा रचे गये पदार्थों का खूब उपभोग करे पर अपनी सुबुद्धि को बनाये रखे। गायत्री मन्त्र का भी यही सार है।

* * *

भारत की विपुल वन सम्पदा की पुराने युग से ही अत्यधिक गीत गाये गये हैं। वन भारतीय संस्कृति के उद्गम स्थान थे। उन वनों के एकान्त वातावरण में ऋषि-मुनियों ने प्रसिद्ध शास्त्रों और दर्शनों की रचना की। परन्तु रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्यों में दंडकारण्य, नन्दनवन और खाण्डव वनों का इतना वर्णन होने पर भी हमारा ज्ञान उनकी वन सम्पदा के बारे में सीमित है।

पेलिनोलाज़ी और इस के उपयोग

—डा० पुरुषोत्तम कौशिक

परागकरण (पालन ग्रेन) और बीजाणु (स्पोर्ज) के अध्ययन को पेलिनोलाजी कहते है। पराग-कण अनावृतबीजी (जिम्नास्पर्मज) और आवृतबीजो (एन्जयोस्पर्मज) पौधों में बनते हैं। पेलिनोलाजो शब्द की रचना एक ग्रीक भाषा के शब्द से हुई जिसका अर्थ होता है दूर दूर फैलना। ये परागकणों और बीजाणुओं के दूर दूर बिखरने के सन्दर्भ में है। परागकरण गोल या अण्डाकार आकृतियों के होते हैं। इनके बारे में प्रायः कहा जाता है कि इनका जन्म पुंकेसर के परागकोष में होता है और मृत्यु अण्डप (कारपल) अथवा स्त्री बोजाणुपर्ण (मैगास्पोरोफिल) के वार्तिकाग्र पर होती है। परागकणों की इस यात्रा को परागकरण कहते हैं। स्पष्ट है कि परागकणों का हमारे लिये उतना ही महत्व हैं जितना कि फलों और बीजों का। पेलिनोलाजी की आधुनिक जानकारी का श्रेय स्वीडन के प्रोफेसर गुन्नर एड्र्टमन को है। भारत में भी डाक्टर पी० के० के० नायर, डाक्टर मिथिलेश चतुर्वेदी तथा अन्य शोध कर्ताओ ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है।

प्रथम इण्डियन पेलिनोलाजिकल कांग्रेस पंजाब विश्वविद्यालय, चन्डीगढ़ के वनस्पति विभाग में सन् १९७४ में हुई। इसका फाउन्डेशन लैक्चर "इवॉल्यूशन ऑफ स्पोर थ्रू दी एजज़" विषय पर प्रोफेसर पी० एन० मेहरा ने दिया।

ऐतिहासिक दृष्टि से परागकरण (पालन ग्रेन) का उपयोग बहुत पुराना है। पुराने भारतीय ग्रन्थों में ताज़गो लाने वाले पराग स्नान का वर्णन है। कहते हैं कि भगवान शंकर अमलतास के पराग से भगवान विष्णु को स्नान कराते थे और फिर उनके सिर पर गंगाजल बरसाते थे।

चुड़ारत्व धरलसा चूर्ण स्नपनं विधायते पूर्व।
रंगे-शपादुके त्वामभिषिञ्चसि मौलिगंव्या शम्भुः॥

पेलिनोलाजी का उपयोग निम्नलिखित बातों के लिये किया जा सकता है।

फसलों के अच्छे बीज बनाने के लिये:— पालन की स्टोर करने की विधियाँ, उनकी वायबिलिटी के बारे में तथा अन्य उपयोगी जानकारी प्लान्ट ब्रीडिंग प्रोग्रामों में बडी लाभकारी रहती है। हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार में डाक्टर वरधीज़ तथा उनके साथियों ने सरसों के बीजों को ०.२५ प्रतिशत, ०.५ प्रतिशत तथा १.० प्रतिशत कोलचिसीन में आठ, बारह और चौबीस घन्टेतक भिगोकर पानी से साफ करके उगाया। इन प्रयोगों से वे पालन स्टेराइल सरसों के पोधे बना सके। पालन स्टरिलिटि हाईब्रिड बीजबनाने के लिये बड़ी महत्वपूर्ण है।

मधुमक्खी पालन उद्योग में:— मधुमक्खियों के मुख के भागों पर और उनी टाँगों के तीसरे जोड़े पर लगे बास्केट्स पर चिपके पालन ग्रेन के अध्ययन से यह जानकारी मिलती है कि ये किन–किन तरह के फूलों और पौधों से शहद इकाट्ठा करने जाते हैं। रबड़ रिसर्च इन्सटीट्यूट ऑफ इन्डिया, कोटायम (केरल) के वैज्ञानिक जयरथनम ने रबड़ के पेड़ों पर लगे छत्तों की मधुमक्यियों के मुख और टांगों पर परागकण न मिलने पर सिद्ध किया कि मधु फूलों से नहीं अपितु पत्ते के डन्ठल पर लगी ग्रन्थि से एकत्रित किया हैं।

फारेंसिक विज्ञान में—पेलिनोलाजी अपराधियों को पकड़ने में भी सहायता करतो है। एक बार इस प्रकार का समाचार था कि इंग्लैंड में स्मगलिंग का गेहूँ पकड़ा गया। यह मालूम करना असम्भव हो गया कि गेहूँ आया कहाँ से था? बोरियों में गेहूँ के साथ लगे मुख्यता प्रोटियेसि के पालन और साथ मिले यूकैलिपटस और अकेसिया के पत्तों के टुकड़ों का अध्ययन करके, पेलिनोलाजिस्ट यह बता सकें कि गेहूँ आस्ट्रेलिया से आया था।

फार्मको पैलिनोलाजी— हेफ़ीवर तथा अस्थमा पालन ग्रेन्स और स्पोर्स से होता है। पेलिनोलाजी का ज्ञान इन बिमारियों में तथा एलर्जी वाली कुछ बीमारियों का अध्ययन करने में काम आता है।

भूगर्भ में तेल तथा कोयले के तलाश करने में:— स्पोर्स के बारे में जानकारी तेल की तथा कोयले की खानों को खोजने में लाभकारी है।

वर्गीकरण:— पौधों के वर्गीकरण में भी पेलिनोलाजी बड़ी सहायक है।

* * *

चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में एक वन अधिकारी होता था। उसकी सहायता के लिये कई अन्य कर्मचारी थे। अशोक महान् ने राज मार्गों के दोनों ओर वृक्ष लगाने पर विशेष बल दिया। मुग़ल सम्राट वनों का आखेट के लिये संरक्षण करते थे और बाग तथा, उद्यान में रुचि रखते थे।

सूर्य से ऊर्जा

—डा० अमिताभ सिन्हा

वर्तमान समय में ऊर्जा की समस्या विश्वव्यापी बन चुकी है। ऊर्जा किसी भी देश की प्रगति के लिये आवश्यक है। विकसित या अविकसित सभी देशों की आर्थिक अवस्था की उन्नति के लिये इस का महत्वपूर्ण योगदान होता है। कारखानों के चलाने में, सिंचाई के लिये, यातायात के साधनों में तथा और भी अनेक कार्यों में इसका प्रयोग होता हैं।

ऊर्जा के उद्गमों में निम्नलिखित प्रधान है। कोयला, तेल (मिट्टी का तेल, पैट्रोल, डीज़ल आदि), प्राकृतिक गैस, जल–विद्युत शक्ति और परमाणु-ऊर्जा। इनमें में से तेल का प्रयोग अधिक होता है। परन्तु तेल के मूल्यों की बहुत अधिक वृद्धि के कारण आज प्राय: सभी विकसित एवं अविकसित देशों में वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि हुई हैं। इसी कारण आज ऊर्जा के नये साधनों के लिये अनुसन्धान कार्य पर गम्भीर रूप से विचार किया जा रहा है। इस सन्दर्भ में सूर्य से प्राप्त ऊर्जा मनुष्य के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है। पृथ्वी को सूर्य से ऊर्जा की प्राप्ति निरन्तर रूप से होती है। विश्व के कोयला, तेल आदि के भण्डार भविष्य में समाप्त हो जायेंगे, परन्तु सौर ऊर्जा मानव को मिलती ही रहेगी।

सूर्य से प्राप्त ऊर्जा के और भी कई लाभ हैं। इसे बहुत ही साफ ऊर्जा स्रोत माना जाता हैं क्योंकि यह वातावरण को दूषित नहीं करता। कोयला जलाने से या तेल प्रयोग करने से जो गैस उत्पन्न होते हैं वह विकट रूप से वातावरण को दूषित करते हैं। बड़े नगरों में तो यह समस्या गंभीर रूप लेने लगी है। वातावरण के दूषित होने से जनसाधारण के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। परमाणु–ऊर्जा साधारणत: यूरेनियम, प्लूटोनियम आदि से प्राप्त होती है। इसके प्रयोग के लिये बहुत ही सावधानी की आवश्यकता है क्योंकि यदि व्यक्ति देर तक इससे सीधे सम्पर्क में रहे तो उसकी मृत्यु भी हो सकती है। इसके अतिरिक्त परमाणु–ऊर्जा का प्रयोग यदि युद्धों में आरम्भ हो जाये तो समस्त मानव जति के समाप्त हो जाने की सम्भावना है। इसलिये जिन देशों को इसके प्रयोग की विधि का ज्ञान है वह दूसरे देशों को इस दिशा में मदद करने में उत्सुक नहीं है। आतंकवादियों को यदि किसी प्रकार से पर्याप्त मात्रा में इन पदार्थों की प्राप्ति हो जाती है तो वह किसी भी देश के लिये घातक सिद्ध हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त तेल की भाँति इन के भन्डार भी विश्व में सीमित मात्रा में ही है। इन सभी तथ्यों पर विचार करने पर सूर्य से प्राप्तऊर्जा एक अत्यन्त उपयोगी ऊर्जा स्रोत प्रतीत होता है।

आज प्राय: सभी विकसित देशों में सूर्य से प्राप्त ऊर्जा के उपयोग करने की विधियों पर अनुसन्धान कार्य पर बहुत प्रयास किया जा रहा है।

भारत में भी इस दिशा में कार्य आरम्भ हो गया है। भारत के लिए तो सौर ऊर्जा वरदान ही सिद्ध होगी क्योंकि यहां अधिकांश क्षेत्रों में समस्त वर्ष सूर्य की किरणें पर्याप्त मात्रा में पहुंचती है। यदि वे शीतप्रधान देश, जहाँ वर्ष के अधिकाँश समय सूर्य की किरणें कम ही मिलती हैं, सूर्य की ऊर्जा का उपयोग कर सकते हैं तो भारत जैसे देश के लिए तो यह अनिवार्य ही होना चाहिए। ग्रामों के लिए यह बहुत लाभदायक होगा क्योंकि एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने के लिए बिजली के लम्बे तारों की आवश्यकता नहीं रहेगी। इस के लिए सिलिकोन अर्धचालक संगमों का प्रयोग किया जाता है जिन्हें तकनीकी भाषा में सोलर सैल कहते हैं। इसमें सूर्य की किरणों को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित कर दिया जाता है। तदुपरान्त इस विद्युत ऊर्जा से पम्प भी चलाये जा सकते हैं जो कि धरती से जल निकालकर सिचाई के काम आ सकते हैं।

इस प्रकार सूर्य से प्राप्त ऊर्जा का उपयोग करना किसी भी देश के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकता है।
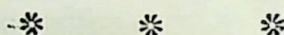
* * *

वृक्षारोपण

धरती के उपजाऊपन को कायम रखो, बढ़ाओ, वृक्षारोपण करो, अपरदन को अब दूर भगाओ। शिव को भाँति जहर पी कर जो अमृत बरसाते हैं उन्हें उगाकर आज प्रदूषण से छुटकारा पाओ। हरे भरे नाना रंग वाले पेड़ों से भूमि सजाओ, मिले सभी कुछ जिन वृक्षों से उनको शीश झुकाओ।

—फारिग

अरे यह क्या ?

—डॉ० वी० शंकर

कल तलक फुरसत न मिलती थी
रसोई से जिन्हें,
आज वह आज़ाद हैं कुछ
गुन-गुनाने के लिये।

चन्द मिनटों में रसोई का
निबट जाता है काम।
अब नहीं कहती हैं वह
मिलता नहीं उनको आराम ॥

१९४५ की एक शाम। स्थान है वाल्थम (उत्तरी अमरींका) में स्थित रेथियन कम्पनी की प्रयोगशाला। एक वैज्ञानिक रडार वैकुअम नलिका के पास रख देता है। कुछ ही क्षण बीते होंगे कि उस व्यक्ति की निगाह चाक्लेट के टुकड़े पर पड़ती है। वह विस्मित होता है। चाकलेट का टुकड़ा हलुआ जैसा मुलायम हो गया है। यह व्यक्ति है पर्सी स्पेन्सर। इस घटना चक्र से स्पेन्सर का मस्तिष्क तेजी से काम करता है। वह मक्का के कुछ दाने और एक अण्डा मंगाता है। दानों को वह रडार के एन्टीना के सामने रखता है। अरे यह क्या ? दाने नाचते हैं और शीघ्र ही फूल की तरह खिल उठते हैं। जैसे भाड़ में भूनने पर हो जाते हैं। अब वह अण्डे को रडार के हार्न के पास रखता है। अण्डा बम की तरह फूट पड़ता है।

इन घटनाओं के विश्लेषण से एक जबरदस्त तथ्य उभर कर सामने आया है। वैज्ञानिक ने यह निष्कर्ष निकाला कि रेडियो तरंगे या माइक्रोवेव खाना पकाने के काम आ सकती है।

आज माइक्रोवेव द्वारा सुअर के गौश्त की एक स्लाइस को केवल एक मिनिट में पकाया जा सकता है। इसी प्रकार आलू को भूनने में केवल चार मिनिट लगेंगे। माइक्रोवेव का चूल्हा टैलीविजन सैट की तरह दीखता है। इस चूल्हे में अनेक खूबियां हैं—इससे रसोई गर्म नहीं होती, वर्तन धोने का काम कम और आसान हो जाता है, ऊर्जा की बचत होती है और खाना बहुत तेजी से पकता है। इन तरंगों द्वारा भोजन, कागज, प्लास्टिक, शीशे या चीनी पर पकाया जा सकता है। माइक्रोवेब द्वारा पकाये गये भोजन में उसका प्राकृतिक रंग बना रहता है और उसकी सुगन्ध बढ़ जाती हैं। चूल्हे को साफ करना बहुत आसान है। भीगे कपड़े से पोछना भर काफ़ी होता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि भोजन चूल्हे की दीवारों पर चिपकता नहीं। माइक्रोवेव से खाना पकाने में ऊर्जा बेकार बिल्कुल नहीं जाती क्योंकि माइक्रोवेव की प्रायः सारी की सारी ऊर्जा सीधी भोजन में जाती है।

भोजन पकाने के लिए आग की खोज के बाद माइक्रोवेव का भोजन पकाने के लिए उपयोग सबसे बड़ी खोज है। वह दिन दूर नहीं जब यह

तरंग आज के प्रचलित खाना पकाने के साधनों, जैसे गैस, बिजली, लकड़ी और कोयले के चूल्हों, पीछे छोड़ देगी।

अब प्रश्न यह है कि माइक्रोवेव भोजन को इतनी जल्दी कैसे पकाती है ? तो सुनिये। आप जरा अपनी हथेलियों को तेजी से रगड़िये। आप देखते हैं कि उष्मा पैदा होती है और हथेली गर्म हो जाती है। बिल्कुल इसी प्रकार माइक्रोवेव भोजन पर प्रभाव करती है। भोजन के अन्दर प्रवेश करने पर माइक्रोवेव नमी के कणों में तीव्र कम्पन पैदा करती है—यह कण एक सैकन्ड में २ अरब ४५ करोड़ बार कम्पन करते हैं। कम्पन से पैदा होने वाली रगड़ से भोजन गरम हो जाता है। इस तरह हम देखते हैं कि माइक्रोवेव सीधा भोजन में ऊष्मा नहीं पहुंचाती है। पहले यह भोजन में तुरन्त जज्ब हो जाती है और फिर वहाँ ऊष्मा पैदा करती है। यह तरंगें उन तरंगों से मिलती जुलती है जो टेलीविजन और रेडियो स्टेशनों से प्रसारित की जाती है। माइक्रोवेव ऊर्जा की तरंग हैं।

* * *

भारतीय वनों की वैज्ञानिक व्यवस्था के लिए पहला ठोस कदम तत्कालीन वायसराय लार्ड डलहौजी ने भारत सरकार के तीन अगस्त, १८५५ के मेमोरेन्डम द्वारा उठाया था। इस में उल्लिखित था कि वनों का संहार इस प्रकार नहीं किया जाना चाहिए जिससे कि वे नष्ट हों।

भारतीय वन अनुसंधान की स्थापना सन् १९०६ में हुई।

आर्यभट्ट-भास्कर-रोहिणी

प्रो० विजयेन्द्र कुमार

आर्यभट्ट, भास्कर, रोहिणी इन नामों की संसार में बड़ी चर्चा हुई है। ये भारत के द्वारा अन्तरिक्ष में विभिन्न उपयोगों के लिए भेजे गये उपग्रहों के नाम हैं। जबकि हमारे द्वारा फेकी हुई कोई वस्तु थोड़ा ऊपर ही जाकर लौट आती है ऐसी स्थिति में ये जटिल मशीनें इतना ऊपर जाकर अपना कार्य किस प्रकार करती हैं इसे हम निम्न प्रकार समझ सकते है।

पृथ्वी के आकर्षण के कारण पृथ्वीतल से आकाश की ओर फेकी वस्तु पुनःनीचे चली आती है। यदि फेंकने का वेग बढ़ाते जायें तो फेकी गयी वस्तु के द्वारा प्राप्त ऊँचाई भी बढ़ती जाती है। इसी प्रकार यदि कोई पिंड किसी ऊँचे स्थान से क्षितिज दिशा में प्रक्षिप्त की जाय तो कुछ देर बाद में फेकें गये स्थान से कुछ क्षितिज दूरी पर गिर पड़ता है। इस स्थिति में भी प्रक्षेक वेग बढ़ाने पर प्रक्षिप्त द्वारा प्राप्त क्षितिज दूरी बढ़ती जाती है। इस तरह यदि किसी पिंड को किसी ऊंचे स्थान से आठ किलोमीटर प्रतिसेकिंड का वेग देकर प्रक्षिप्त किया जाय तो पिंड पृथ्वी पर नहीं गिरेगा। वह पृथ्वी के चारों ओर एक कक्षा में परिक्रमण करने लगेगा। यह वेगेगणितज्ञों ने गणना से ज्ञात किया है।

अब यह समस्या हुई कि किसी पिंड को इतना वेग किस प्रकार प्रदान किया जाये। सामान्य साधनों से यह संभव नहीं है। इसके लिए जेट प्रणाली का उपयोग किया गया है।

किसी बर्तन में भरे द्रव या गैस के एक बहुत छोटे छिद्र से होकर तीव्र गति से बाहर निकलने की क्रिया को 'जेट' कहते हैं। जिस वस्तु में से निकलता है वह वस्तु यदि चलने को स्वतंत्र है तो विपरीत दिशामें चलने लगती है। इस प्रकार से किसी वस्तु को गति कराने को जैट प्रोपलजन कहते हैं।

इसी प्रक्रिया से जैट हवाई जहाज उड़ते हैं। वायु तथा रासायनिक मिश्रण के जलने से गर्म गैसे बनती है जो बहुत तेजी से फैलती हैं। ये गैसे जहाज के पिछले भाग से बड़ी तेजी से बाहर निकलती हैं। परिणाम स्वरूप जहाज विपरीत दिशा में अर्थात् आगे की दिशा में गति करता है।

जेट जैसा ही राकेट प्रोपलजन भी होता है। राकेट प्रोपलजन में राकेट का वेग अधिक तीव्र गति से बढ़ता है। इसका कारण यह है कि राकेट का द्रव्यमान कम होता रहता है।

कृत्रिम उपग्रह (अंतरिक्ष में अनुसंधान के लिऐ भेजी जाने वाली मशीन) को कक्षा में स्थापित करने के लिए एक से अधिक राकेटों को मिलाकर बने हुए बहुक्रम राकेट की सहायता ली जाती है।

सबसे पहले कार्य करने वाला राकेट सब से बड़ा तथा सबसे भारी होता है। अन्तिम क्रम का राकेट सबसे हलका होता है। सबसे पहले प्रथम क्रम के राकेट का इंजन कार्य करना आरम्भ करता है। ईंधन समाप्त होने पर यह स्वय शेष भाग से पृथक हो जाता है और दूसरे क्रम का इंजन काय आरम्भ कर देता है। अत में अंतिम क्रम का इंजन कार्य करना आरम्भ करता है उसी से कृत्रिय उपग्रह को कक्षा में गति करने के लिए आवश्यक वेग प्राप्त होता है।

कृत्रिम उपग्रह की चाल तथा परिक्रमणकाल (एक परिक्रमा में लगने वाला समय) उपग्रह की पृथ्वी तल से ऊंचाई के अनुसार होते है। पृथ्वी के समीप परिक्रमा करने वाले उपग्रह की चाल लगभग आठ किलोमीठर प्रति सेकेन्ड तथा परिक्रमण काल लगभग ऐक घन्टा चौबीस मिनट होता है।

कुछ दिन पूर्वतक कृषिम उपग्रह छोड़ने की क्षमता केवल पाँच देश रखते थे। इन देशों के नाम हैं रुस, अमेरिका, फ्रांस, जापान तथा चीन। अब भारत भी उपग्रह छोड़ने वाले देशां में सम्मिलित हो गया है। 'आर्य भट्ट' तथा 'भास्कर' के पश्चात् इस दिशा में नवीनतम सफलता 'रोहिणी' नाम के उपग्रह की स्थापना करके भारत ने प्राप्त की है।

'रोहिणी' उपग्रह १८ जुलाई १९८० को भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के श्री हरिकोटा केन्द्र से प्रक्षिप्म किया गया था। इस उपग्रह का वजन ३५ किलोग्राम था इस उपग्रह का परिक्रमण काल ९० मिनट है। इस उपग्रह को कक्षा में स्थापित करने वाले राकेट की गति ४४०५०९० कि० मीटर प्रतिघंटा थी। इस राकेट ने 'रोहिणी' उपग्रह को कक्षा में स्थापित करने का कार्य केवल ८ मिनट में ही पूरा कर लिया था।

कृत्रिम उपग्रहों से प्राप्त जानकारियाँ भविष्य में बहुत उपयोगी सिद्ध होगीं। मौसत की पूर्व सूचना प्राप्त करके आने वाले खतरे (तूफान, आदि) से सतर्क होकर उससे होने वाले विनाश को कम से कम किया जा सकता है। अन्तरिक्ष अनुसंधान का उपयोग जलयानों तथा वायुयानो के लिए किन्हीं दो स्थानों के बीच सबसे कम लम्बा रास्ता निर्धारित करने में भी हो सकेगा। इस प्रकार समय और ऊर्जा की बचत होने से भारी आर्थिक लाभ होगा। टेलीफोन बातचीत की प्रचलित प्रणाली में बहुत तारों की आवश्यकता होती है। आने वाले समय में इसमें और वृद्धि होगी लेकिन यदि उसके लिए संचार उपग्रहों का उपयोग किया जाय तो यह सस्ता और सुविधा जनक होगा।

भारत में यह कार्य अभी प्रारंभिक अवस्था में है। लेकिन ऐसी आशा है कि थोड़े से समय में ही हम इस दिशा में बड़ी प्रगति कर लेगें।

* * *

प्राचीन वाङ्मय में वैज्ञानिक तत्त्व

—प्रो० जयदेव

मैक्समूलर ने अपने ग्रन्थ "भारत हमें क्या सिखाता है" में वेदों को विश्व पुस्तकालयों की सर्व प्रथम पुस्तक अंगीकार किया है। वेदों में किस प्रकार का ज्ञान है ? इस विषय को लेकर एक लम्बे काल से विवाद की स्थिति बनी हुई है। मान्यता चाहे प्राचीन हो और चाहे अर्वाचीन हो हमें सत्य की खोज करनी चाहिए। हमें कोई तथ्य इस लिए स्वीकार करना है कि उसे प्राचीन काल से माना जाता रहा है, यह वैज्ञानिकता अथवा सत्य अन्वेषण की विधि नहीं मानी जा सकती है। परन्तु इस के साथ ही यह मान्यता उससे भी अधिक खंडन करने योग्य है कि यह मान लिया जाय कि जो कुछ प्राचीन साहित्य में है वह किसी भी अवस्था में नहीं मानना है, चाहे कितना भी सत्य वैज्ञानिक तथ्य का प्रतिपादन क्यों न हो। जो भी शोध किया जाय वह तथ्य एवं शुद्ध तर्क के आधार पर मान्य होना आपेक्षित है।

आज से लगभग दस वर्ष पूर्व की आधुनिक पुरातत्व वेत्ताओं की मान्यता के अनुसार इस संसार की समस्त गतिविधि एवं इतिहास केवल १० हजार वर्ष से लेकर १५ हजार वर्ष से अधिक पुराना नहीं माना जाता था। जब उन विद्वानों का यह कहा जाता था कि भारतीय गणित और वैदिक आधार पर विश्व की रचना एवं उसका इतिहास लगभग दो अरब वर्ष पुराना है तो वे विद्वान् मखौल उड़ाते थे। परन्तु आधुनिक नवीनतम आविष्कार एवं वैज्ञानिक निष्कर्षों ने उस मखौल का मखौल यह खोज कर के कर दिया कि सृष्टि का इतिहास दो ही नहीं अपितु लगभग तीन अरब वर्ष पुराना है। अभी दस वर्ष पूर्व की मान्यता कि एक मनव पिञ्जर की हड्डियों का रासायनिक विश्लेषण करने से वह दो करोड़ वर्ष पुराना सिद्ध हुआ है। चन्द्रमा से लाया गया एक पत्थर का टुकड़ा तीन या इस से भी अधिक अरब वर्ष पुराना विश्व की वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं ने माना था।

उपर्युक्त निष्कर्षों से यह स्वतः सिद्ध हो जाता है कि मानव का सांस्कृतिक एवं साहित्यिक इतिहास हजारों वर्ष नहीं अपितु करोड़ों वर्ष पुराना है।

इस तथ्य के मानने पर अब क्या यह सही हो सकता है कि मनुष्य करोड़ों वर्षों तक मूर्ख रहा है और वह केवल कुछ सौ वर्षों से ही बुद्धिमान बना है। वस्तुतः सत्य तथ्य यह है कि मानव इतिहास में सैकड़ों बार नहीं अपितु लाखों बार विकास एवं ह्रास की स्थिति आई है। विकास की चरम सीमा के पश्चात् भयंकर युद्ध एवं प्राकृतिक घटनाओं से अनेकों बार विश्व

खंडहर बना, फिर विकास हुआ और उसके पश्चात् पतन। इस क्रम में मानव इस समय विकास की चरम सीमा की स्थिति में से गुजर रहा है। यह विकास की स्थिति बनी रहे, वैज्ञानिक उपलब्धियां जीवित रहें और मानव सभ्यता का पुनः पतन न हो, इस चिन्ता में आज मानव समाज शास्त्री, दार्शनिक एवं बुद्धिजीवी वर्ग अत्यन्त घुल रहा है। निशास्त्रीकरण एवं विश्व सरकार का गठन आदि की भावनायें इस उपर्युक्त तथ्य के परिणाम एवं निष्कर्ष हैं ? परन्तु क्या ये उदात्त भावनायें एवं मान्यतायें विश्व को विनाश से बचा सकेंगी ? किस के सामने यह प्रश्नवाचक चिह्न नहीं है ? इसका वैज्ञानिक एवं दार्शनिक तथा यथार्थ उत्तर एक ही है कि इस चरमोत्कर्ष वैज्ञानिक युग का अन्त फिर वही बैलगाड़ी घरों में तेल का दीपक, शिकार के लिए पत्थर एवं लोहे के नुकीले शस्त्र और तीर कमान होंगे। निरुक्तकार ने आज से हजारों वर्षों पूर्व वैज्ञानिक खोज की थी कि विश्व के प्रत्येक पदार्थ की छः गति होती हैं। अस्तित्वरूप, उत्पन्न, बढ़ना, विपरिणाम, क्षयत्व और विनाश।

इस उपर्युक्त निष्कर्ष के आधार पर यह मानना उचित है कि वैज्ञानिक उन्नति भी अनेकों बार मानव इतिहास में हुई होंगी और पुनः वे लुप्त हो गई हैं। विज्ञान की समस्त शाखाओं का वर्णन हमारे प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध है। यहां विमानों का वर्णन प्रस्तुत है।

वेदों के मन्त्रों में जिस प्रकार के विमानों का वर्णन मिलता है, उसका विस्तार एवं शोध करके भरद्वाज मुनि ने ५६ प्रकार के विमानों के नाम अपने ग्रंथ "यत्र सर्वस्व" में गिनाये हैं। यह ग्रन्थ बृहद् विमान शास्त्र के नाम से स्व० स्वामी ब्रह्ममुनि ने प्रकाशित कराया है। इन विमानों के कुछ नाम इस प्रकार हैं — भैरव, नन्दन, वटुक विरिञ्चि, तुम्बर, वनतेय भेरुण्ड-मकरध्वज शृंगरक, अम्बरीष सैंहिक, मातृक गरुडास्य, गजास्य, वसुदेव, सूरसेन बीरबाहु शुकतुण्ड, जम्बुक, गिरीश, कुमुद, कौञ्चिक, अजगर, पंचदल दुन्दुभिः मायूरक, रविमण्डन, व्याघ्रमुख, विष्णुरथ, सौवर्णिक, बृहत्, कुञ्ज, महानट और ककुम इत्यादि।

रामायण काल का बहुचर्चित "पुष्पक" विमान का नाम आता है। जब राम को रावण के साथ युद्ध में विलम्ब हो गया था, उस समय उनको पुष्पक नामक विमान से अयोध्या ले जाया गया था। वह अत्यन्त आराम के साधनों से युक्त बताया जाता है। इसे कुछ भ्रान्त विद्वान् गप्प कह कर उपेक्षा कर देते हैं। परन्तु यहां तो द्वापर में एक पुष्पक ही नहीं अपितु ५६ प्रकार के विमान थे।

विमान के निर्माण में किस प्रकार की धातु या लोहादि होना अपेक्षित है, इस का वर्णन भी विस्तार पूर्वक प्राप्त होता है। उसका वर्णन इस प्रकार प्राप्त है कि — क्ष्विङ्गा-लोह विशेष या जस्ता, पाषाण चूर्ण, कान्त कृष्ण लोह, वज्र, अभ्रक, कमठा, शिलारस, डिम्भारि, घोण्टा मैन-फल, कर तरवर शुल्व-त म्ब, विरञ्चि, कर्ण अर्क मन्दार पारा, धतूरा, सुरञ्जी, कांसादि। इन उपर्युक्त वस्तुओं का समान भाग लेकर विधिवत् तीन बार शुद्ध करके शशभूषाभ मुखपात्र में भर दें। मण्डुक कुण्ड के मध्य में रख कर पचास्य मस्त्रिका से २०० दर्जे की उष्णता से धोंक कर नेत्रपर्यन्त गला कर उस रस को लेकर शीघ्र यन्त्र के मुख में विधि से डाल दें। इस विधि से पुष्टि वर्धक नीलवर्ण अत्यन्त सूक्ष्म सुदृढ़ भार रहित भास्वर वैडालिक लोहे का निर्माण हो जायेगा।

वायुयान में किस प्रकार का लोहा उपयोग में लाया जाय जिस पर तापमान एवं अन्य वातावरण का प्रभाव न हो, उस को बनाने की उपर्युक्त विधि है।

उस समय विमानों में एक विद्युम दर्पण लगता था जिसकी निर्माण विधि इस प्रकार बतलाई गई है। उस गोपुर यन्त्र का वेग विद्युत से उत्पन्न अग्नि के वेग को पूर्ण रूप से अति वेग से खींचकर स्वयं पी लेता है। पश्चात् सूर्य किरण शक्तियाँ अपने तेज से गोपुस्थ दारुण उस शक्ति को लेकर महामाण्डलिक वात मण्डल में आकाश के अन्दर विलीन कर देती है। पुनः उस शक्ति का विनाश हो जाता है। पश्चात् वह हिम की भाँति अत्यन्त शीतल हो जावे। उससे विमान यान में बैठे चालक यात्रियों को सन्तोष एवं सुख प्राप्त होना चाहिये। तथा विमान भी सुरक्षित रहे। अतः विमान में शास्त्र विधि से इसे अद्भुत स्थिर विद्युत दर्पण नामक यन्त्र को संस्थापित करे।

विमान में एक ही नहीं अपितु इस प्रकार १२ विद्युत दर्पण यन्त्रों को लगाने का विधान प्राप्त है।

मूल संहितायों में जिस प्रकार के वायुयानों का संकेत प्राप्त है, वे विमान एक देश से दूसरे देश और लोक-लोकान्तरों में जाने वाले विमान भी बतलाये गये है।

विभिन्न प्रकार की सवारियों या यानों से हमारा भूमि, जल और आकाश में प्रतिदिन सुविधापूर्वक आना जाना है वे यान लोहा, ताम्बा और चान्दी आदि तीत धातुओं से निर्मित होती है। जैसे नगर या ग्राम की गलियों में झटपट जाना आना होता है, वैसे ही दूर देश में भी उन सवारियों से शीघ्र-२ जाना आना होता है। ये यान सभी दुर्गम और दूर स्थानों में जाने वाले होते हैं। ये जो अस्त्रि युक्त यान निर्मित होते है वे बड़े२ समुद्रों के मध्य से भी पार पहुंचने में समर्थ होते है। इन पृथ्वी, जल और आकाश में चलने वाले यानों में वाष्प वेग के लिये एक जलाशय बनाकर उसमें जल से चैक करना चाहिये ताकि वे अत्यन्त तीव्र गति से सुख पूर्वक चलने वाला सिद्ध हो सके।

ये विमान मन के वेग समान चलने वाले हों इन यानों में तीन प्रकार के पहिये हों, जिन से जल और पृथ्वी के ऊपर चलाया जा सके। उनमें तीन-तीन थम्बे ऐसे बनाने चाहिये कि जिन के आधार पर कला यन्त्र लगे रहें ये थम्भे काष्ठ या लोहे के साथ लगे रहें। सभी पुर्जे इस प्रकार स्थिर रहें कि कभी उन में कोई विकार न पाये और ये सवारियों को सुख पूर्वक ले जा सकें।

इसी प्रकार यानो का वर्णन विभिन्न रूप से किया है कि समुद्र, भूमि और आकाश में चलने वाले यानों का निर्माण करना चाहिये। इन यानों के बाहर भी थम्भे रचने चाहिए जिन में सभी प्रकार के कलायन्त्र लगाये जाने चाहिये। उन में से एक चक्र ऐसा बनाना चाहिये जिसके घुमाने से सभी यन्त्र ओत-प्रोत होकर घूम सकें। उनमें तीन-तीन सौ बड़ी-बड़ी कलें अर्थात् पेंच लगते हैं, जिनसे उसकी यान सभी मशीनें जुड़ जायें। ६० कला यन्त्र होने अपेक्षित हैं, कुछ चलते रहें और कुछ बन्द रहें। जब विमान ऊपर चढ़ाना हो तब उस भाप स्थान का मुख बन्द करना अपेक्षित हैं। अतः इसमें सभी ऊपर नीचे, बायें दायें, वापिस चलने के यन्त्र लगाने चाहिये।

वेदों में सेंकड़ों स्थानों पर विमान शब्द या यान, नाव आदि शब्दों का प्रयोग है। इतना अवश्य सिद्ध होता है कि विमान विद्या के ज्ञान के साथ-साथ उस समय के ऋषि आध्यात्मिकता परित्याग नहीं करते थे जैसा कि कहा गया है कि महर्षि भारद्वाज द्वारा वेद का निर्मंथन कर यन्त्र सर्वत्र ग्रन्थ को मक्खन के रूप में निकाल कर रखा है। इस "यन्त्र सर्वस्व" में वैमानिक प्रकरण ५०० सूत्रों में एवं आठ अध्यायों में निबद्ध है। इनमें त्रिपुर नामक वायुयान पृथ्वी, जल और आकाश में समान रूप में चलने वाला माना है। विमान के ३२ प्रकार रहस्य बतलाये गये हैं जैसे विमान का अदृश्यकरण, शब्द प्रसारण, लङ्घनु रूपाकर्षण, शब्दाकर्षण, शत्रुओं पर धूम प्रसारण, शत्रु सेब चाने को स्वविमान का मेघवृत करना, दूर से आते हुए शत्रु के विमान पर ४०८० ताड़ो फैंक कर उड़ने में असमर्थ करना, शत्रु सेना पर शब्द बम फेंकना आदि का प्रयोग विमानों द्वारा करने का वर्णन मिलना हैं। इसी प्रकार विमान की १२ गतियों का वर्णन मिलता है।

अतः वैदिक वाङ्मय में जहां दर्शन और अन्य गुह्य विद्याओं का व्याख्यान हुआ हैं, वहां भौतिक विद्या और विज्ञान का भी वर्णन प्रचुर रूप में मिलता है। जहां अनेक प्रकार की विधियाँ विमान आदि के निर्माण की क्रमशः मिलती हो वहाँ ये सब कल्पनाएं हैं ऐसा कहना इस साहित्य के साथ अन्याय होगा।

वास्तव में इस प्राचीन तकनीकी विद्या का आधुनिक परिपेक्ष्य में सरकार को आज के वैज्ञानिक और वैदिक वाङ्मय के विद्वानों का एक शोध शाला बनानी चाहिये, हो सकता है वैकल्पिक विमान निर्माण विधि का अविष्कार हो सके और इस भारतीय निधि का उचित उपयोग किया जा सके।

* * *

संसार का पहला मनुष्य जो यूरोप की धरती से ऊपर उड़ा सैन्टा--ड्यूमांट था। इस घटना से प्रभावित होकर ब्रिटिश संवादाता लार्ड नार्थक्लिफ ने कहा था समाचार यह नहीं है कि मनुष्य उड़ निकला हैं, बल्कि यह है कि इंग्लैण्ड अब द्वीप नहीं रहा।

क्या पेड़-पौधे भी सोचते हैं ?

राजेश चौहान

सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र वसु को ही सर्वप्रथम यह सिद्ध करने का गौरव प्राप्त है कि पौधे भी सचेतन हैं अर्थात् वे भी मनुष्य की भाँति सोचते हैं, विचार करते है और उनमें चातुर्य का भी विशेष समन्वय पाया जाता है। उन्होंने ही सर्वप्रथम यह सिद्ध किया की मनुष्य की भाँति ही पेड़-पौधे भी स्वसन क्रिया करते हैं तथा जीवित कोशिकाओं से मिलकर बने होते हैं। मनुष्य के समान ही सुख-दुख की उन्हें भी अनुभूति होती है। उनकी इस खोज ने वनस्पति विज्ञान में हलचल मचा दी और विश्व के अनेक वैज्ञानिकों का इस ओर ध्यान आकर्षित हुआ तो उन्हें और भी आश्चर्य जनक प्रमाण मालूम हुए।

पेड़-पौधों की विचार शक्ति के रूप में अनेकों उदाहरण दिये जा सकते हैं। ऐसे अनेक पेड़-पौधे हैं जो अपने पास आने पर छोटे-छोटे कीड़ों को अपनी विशेष रचनाओं के द्वारा पकड़ लेतें हैं, और धीरे-धीरे उनको शोषित कर लेतें हैं, यह वनस्पति विज्ञान का एक अत्यन्त मनोरंजक भाग है। सर चार्ल्स डार्विन ने इन पौधों के बारे में अनेक अन्वेषण कियें और "इन्सेक्टोवोरस प्लाँट्स" नामक एक पुस्तक लिखी। ये पौधे संसार के विभिन्न स्थानों पर पाये जातें है और कीड़ों से अपना खाद्य प्राप्त कर लेतें है। वैसे तो "फोटोसिथेसिस" द्वारा भी इनका खाद्य संश्नेषण चलता रहता है। ऐसे पौधों के कुछ उदाहरण हैं जैसे—नैपेन्थीस, सिफैलोटोरस, सारासीनिया, डार्लिंगटोनिया, ड्रोसेरा, युट्रिकुलेरिया इत्यादि।

अब आप की मुलाकात एक ऐसे छोटे से पौधे से कराते हैं जिसे "लिनेरिया" कहा जाता है। इन महोदय को पथरीली चट्टानों पर निवास करने का शौक है। इन्हें यदि चट्टान में कोई छेद दिखायी दे जाये तो ये अपनी जड़ों को उस छेद में जमाकर, चाट्टान पर अपने शरीर को फैलाकर, परिस्थितियों से जीवन-संघर्ष करते हुए अपना जीवन व्यतीत करतें हैं। जब यह महोदय अपनी बाल्यावास्था को पारकर अपनी वयस्कावस्था में क़दम रखतें हैं तो इन्हें अपनी वंशवृद्धि का ख्याल आता हैं, तब यह अपनी शाखओं पर रंगबिरंगे फूल खिला देतें है। मधुमक्खियां पराग की खोज में मचलती हुई, इन पर आकर बैठती हैं तो लिनेरिया महोदय के नर भाग में बने पराग कण इनसे चिपक जाते हैं और जब ये मादा भाग पर आकर बैठती हैं तो ये परागकण मादा भाग में बने अण्डे से संयोग करते हैं। इस प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप बीज बन जाता है। अब ये बीज वायु में उड़कर दूसरी चट्टानों के छेद में गिर जाते हैं तथा अनुकुल परिस्थियाँ पाकर फिर से नये लिनेरिया शिशु को जन्म देते है जो समय पाकर वयस्क हो जाता है।

युकेलिप्टस का पेड़ तो आपने अवश्य देखा

होगा परन्तु इनकी विचार शक्ति से आप शायद परिचित न हो तो, इन महाशय के विषय में भी जान लें। यह पेड किसी भी स्थान पर क्यों न उगे अपनी जड़ों को फैलाता हुआ उस स्थान तक ले जाता है जहाँ पर उसे पानी मिल सके। पानी काफी गहराई पर होने पर इसकी जोड़ धरती में सैकड़ों फिट तक चली जाती है।

जिस प्रकार से मनुष्य के शत्रु होतें हैं और वह अपनी रक्षा के उपाय सोच लेता है उसी प्रकार सुन्दर फूलों से युक्त पेड़-पौधों का नुकीले कांटे या दुर्गन्ध युक्त होता उनकी रक्षा भावना से ही परिचालित प्रतीत होता है।

पौधों में मनुष्य के समान उत्तेजन शीलता का गुण भी पाया जाता है। छुई-मुई नामक पौधे को तो आपने अवश्य देखा होगा। छूने पर इसके पत्ते मुरझा जाते हैं। पौधे यद्यपि स्थिर रहते हैं तब भी उनमें गति होती है, उदाहरणार्थ-सूरजमुखी के फूल का सूर्य की ओर घूमना गति का ही उदाहरण है। खट्टी बूटी तथा कचनार की पत्तियाँ दिन में तो खिली रहती हैं, परन्तु रात में बन्द हो जाती हैं। उपर्युक्त विवेचन से हम निष्कर्ष निकालतें हैं कि पौधों में भी जीव जन्तुओं की भांति जीवद्रव्य, जनन, उत्तेजन शीलता, श्वसन, उपापचय, वृद्धि, गति, अनूकूलन सचेतनता आदि विशेषताएँ पायी जाती हैं। अतएव हम कह सकते हैं, पौधे भी चेतन हैं, वे भी सोचते हैं, अनुभव करते है।

* * *
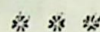
'अनुसंधान' ऐसा शब्द है जिसका काफी उपयोग व दुरुपयोग होता है। वस्तुतः यह-और कुछ नहीं, एक मनः स्थिति है—परिवर्तन का स्वागत करने की मनः स्थिति। यह विगत काल का विवेचन नहीं भविष्य पर विचार करना है। अनुसंधान को, अज्ञात को, पाने के लिए एक 'जुआ' अथवा गेरिला युद्ध भी कहा गया है। अनुसंधान में हमें परीक्षा और हर्ष नैराश्य और विनोद का साक्षात्कार होता है।

—डा० वाई० नायुडम्मा

एक वैज्ञानिक पक्ष—

व्यक्तित्व

भूपेन्द्रकुमार मेहता

संसार में कोई भी दो मानव प्रत्येक दृष्टि से पूर्णतया समान नहीं हो सकते। शिशु से बालक, बालक से किशोर तथा किशोर से वयस्क एवं वयस्क से प्रौढ़ व प्रौढ़ से वृद्धावस्था तक मानव अन्य प्राणी से अधिकाधिक भिन्न होता चला जाता है। शारीरिक तन्तुओं के निर्माण व संश्लेषण की प्रक्रिया जिस प्रकार भ्रूण स्थापना से ही प्रारम्भ होती है, ठीक इसी के समान्तर निरन्तर व्यक्तित्व विकास प्रणाली भी अपना कार्य प्रारम्भ कर देती है, जन्म के तुरन्त पश्चात से लगभग ५ वर्ष तक दोनों प्रक्रियायें साथ २ चलती हैं, तत्वज्ञान धीरे-धीरे वंशानुक्रम के आधार पर वातावरण से प्रभावित होकर यह निर्माण व विकास प्रक्रिया लगभग २० वर्ष तक शारीरिक विकास के साथ ही पूर्ण हो चुकी होती है, इसके पश्चात् केवल परिपक्वता के अंत का समावेश ही संभव है, इस अवस्था के बाद किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व में किसी नवीन कारक के प्रभाव से आकस्मिक परिवर्तन प्रायः कम ही देखा गया है।

सभी माता पिता की यह इच्छा होती है कि उनकी संतान स्वस्थ सुन्दर मेधावी हो, उसका व्यक्तित्व सार्वभौमिक हो। इसके लिए आवश्यक है कि इस समानान्तर विकास प्रक्रिया के प्रत्येक पग पर मनोवैज्ञानिक पक्ष के साथ समाहित वैज्ञानिक पक्ष को भी समझा जाय—

जीव विज्ञान के आधार पर बालक के व्यक्तित्व का निर्माण व विकास उसके शरीर की कोशिकाओं ने विद्यमान रचना 'जीन' से सम्बंधित है। स्वयं में 'जीन' की रचना, संरचना, मौलिकता उसके वंशानुक्रम तथा वातावरण से निर्धारित होती है, जो विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं को अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित करती है। 'जीन' में में उपस्थित अन्य सूक्ष्म रसायन डी० एन० ए० तथा आर० एन० ए० व न्यूक्लिोटाइड़ की संख्या संरचना व्यवस्था तथा विशिष्ट शृंखला क्रम ही अन्ततः व्यक्तित्व का निर्धारण करती है। डी० एन० ए० तथा आर० एम० ए० जो कि मानव शरीर में उपस्थित कोषों के अत्यन्त सूक्ष्म भाग हैं वास्तव में अन्य सूक्ष्म रासायनिक पदार्थों, पेंटोज शर्करा फास्फेट्स तथा नाइट्रोजन बेस आदि से निर्मित है, जो कि अन्ततः C, H; N, G, O, P, आदि सामान्य परमाणुओं के पपस्पर विभिन्न प्रकार के समायोजनों के फलस्वरूप प्राप्त होते हैं।

इस प्रकार इन्हीं परमाणुओं के मध्य विभिन्न बंधों के निर्माण, विकास, समायोजन में वंशानुक्रम, समय-समय पर ग्रहण किये गए खाद्य पदार्थ एवं वातावरण, प्रत्येक क्षण पर महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करता है।

वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाय तो खाद्य पदार्थ

इनके निर्माण के लिए प्रयुक्त सामग्री है व वातावरण इनके निर्माण हेतु ऊर्जा का स्रोत है। तथा वंशानुक्रम एक उत्प्रेरक है जो गति को अनुकूल दिशा दे सकता है।

प्रत्येक नर प्राणी के शुक्राणु में इसी कारण उस प्राणी के व्यक्तित्व के लगभग सभी विशिष्ट गुण विद्यामन होते हैं जो कि उसकी सन्तान में संक्रमित होते चलेजाते हैं। मादा प्राणी का शारीरिक स्वास्थ्य, सौष्ठवता व अन्य विशिष्टता भ्रूण विकास में केवल उर्वरक का ही कार्य कर पाती हैं।

दूसरी ओर वातावरण यह एक ऐसा गूढ़ विषय है, जिसका वैज्ञानिक विश्लेषण अभी तक नहीं हो सका है। इसका स्पष्ट प्रमाण है कि अन्तरिक्ष में उपस्थित प्रत्येक मानव प्रणाली तथा कुछ अन्य विशिष्ट वस्तुएँ अलग-अलग समय पर अपनी विभिन्न तथा विशिष्ट स्थिति में ऐसी अज्ञात आवृत्ति को तरंगे अथवा किरणें उत्सर्जित करते हैं या शोषित करते हैं, जिनका वैज्ञानिक अध्ययन अभी तक प्रारम्भ नहीं हो सका है। जिस प्रकार एक रेडिवो अथवा टी० वी० में सुई घुमाने पर संचार केन्द्र द्वारा प्रसारित इच्छित आवृति प्राप्त होते ही उस विशेष कार्यक्रम को सुना अथवा देखा जा सकता है इसी प्रकार मानव मस्तिष्क भी एक ऐसा जटिल इलैक्ट्रानिक उपकरण है, जिससे समय-समय पर शोषित अथवा उत्सर्जित विकिरणों को एक विशिष्ट दिशा में ध्रूवित, केन्द्रित अथवा क्रम बद्ध करने पर इच्छित कार्य सिद्धि संभव है। समस्त मानव शरीर भी एक चुम्बक की भांति है, जिसका शीर्ष उत्तरी ध्रुव तथा पैर दक्षिणी ध्रुव का कार्य करते हैं जो अन्य किसी भी स्रोत से प्राप्त निकट के विकिरणों के साथ आकर्षण, प्रतिकर्ण, अवशोषण, उत्सर्जन, केन्द्रीयकरण, विकेन्द्रीयकरण प्रक्रिया संचालित करते रहते हैं। साधना, योग-साधना, पूजा, तपस्या, एकाग्रता, चिन्तन, मनन, आस्था, आशीर्वाद, स्वच्छता, सुसंगति, चमत्कारिता, रीति रिवाज की आवश्यकता, अनावश्यकता का इसी आधार पर स्पष्टीकरण संभव है।

मानव की प्रत्येक क्रिया कुछ अंशों में इन विशिष्ट अदृश्य किरणों के पपस्पर आपेक्षिक तथा समायोजित प्रभाव का परिणाम है ये शून्य किरणें लगातार शून्य में उपस्थित ग्रहों से, पृथ्वी पर स्थित विभिन्न जीवित या निर्जीव माडलों से अवशोषित अथवा उत्सर्जित होती हैं।

* * *

संसार का सर्वप्रथम पुरुष जो हवा में उड़ा लुई का कोर्ट इतिहासकार पिलेटे डी रोजिअर था।

साँप

—तिलकराज सेठ

साँप का नाम सुनते ही मनुष्य के चेहरे पर भय की छाया आ जाती है। साँप सम्पूर्ण विश्व में पाये जाते हैं और भारत में भी इनकी संख्या कुछ कम नहीं है। साँप यद्यपि अनेक मनुष्यों की मृत्यु का कारण बनते हैं किन्तु देखा यह गया है कि उन में से पर्याप्त संख्या उन व्यक्तियों की होती है जो भय तथा अज्ञानता के कारण मर जाते हैं, साँप के काटने के कारण नहीं।

भारत में पायी जाने वाली विषैले साँपों की जातियों में मुख्य जातियाँ हैं – कोबरा, क्रेट, वाइपर, पिटवाइपर तथा समुद्री साँप। ये विषैली जातियां अविषैली जातियों से पूँछ तथा शरीर पर पाये जाने वाले स्केल्स को देखकर पहचानी जा सकती हैं। विषैले साँपों की विभिन्न जातियां यद्यपि रंग-रूप, आकार, तथा रचना में एक दूसरे से भिन्न होती हैं तो भी इन में एक समानता अवश्य होती है और यह हैं इन में विष उपकरण का पाया जाना।

विष उपकरण –

प्रत्येक विषैले साँप के विष उपकरण में सामान्यतया दो विष ग्रन्थियां होती हैं। ऊपरी जबाड़े के दोनों ओर आंख से थोड़ा नीचे एक-एक विष ग्रन्थि पायी जाती है। इन ग्रन्थियों में विष बनता है जिसे विष नलिका द्वारा विषैले दांत (फैंग) में पहुंचाया जाता है। ये विषैले दांत अन्दर से खोखले होते हैं और इनके सिरे पर एक छोटा छिद्र होता है। प्रायः इन दांतों की संख्या दो होती है और प्रत्येक दाँत के पीछे एक छोटा सुरक्षित दांत रहता है जो पहले दांत के टूट जाने पर आकार में बड़ा हो जाता है और कार्य करने लग जाता है। साधारणतया विषैले दांत साँप के मुख में पीछे की ओर मुड़े रहते हैं किन्तु जब साँप काटने के समय मुख खोलता है तो ये दाँत खोपड़ी की हड्डियों की सहायता से सीधे खड़े हो जाते हैं। जब मुख में मनुष्य के किसी भाग को पकड़ कर साँप अपना मुख बन्द करता है तो विष ग्रन्थियों पर दबाव पड़ता है और इनसे विष निकल कर दाँतों में आ जाता है और दाँतों के सिरे पर उपस्थित छिद्रों से होता हुआ मनुष्य के घाव में पहुंच जाता है।

सर्प विष –

सर्प विष साँप की विष ग्रन्थियों का कार्बनिक स्राव होता है। इसका रंग हल्का पीला होता है तथा इस में कोई स्वाद या गन्ध नहीं होती। इस में कार्बनिक अम्ल में घुली हुई ३० प्रतिशत विषैली प्रोटीड पाई जाती है। सुखाये जाने पर यह विष छोटे-छोटे टुकड़ों में बंट जाता है जो पानी में घुल जाते हैं। यह विष केवल कटे हुए भाग पर अपना प्रभाव डालता है। प्रत्येक साँप के विष में अपनी विशेषता होती है, कोई श्वसन संस्थान पर प्रभाव डालता है तो कोई हृदय या तंत्रिका संस्थान पर।

एन्टीवेनम –

आजकल साँप द्वारा काटे गये मनुष्य को एन्टीवेनम का टीका लगाया जाता है। प्रत्येक प्रकार के सर्प विष के लिए विशिष्ट टीका लगाया जाता है। हॉफकिन्स इन्सटीट्यूट, बाम्बे एन्टीवेनम के टीके तैयार करने में देश को पर्याप्त योगदान दे रही है। एन्टीवेनम तैयार करने के लिए यहां घोड़ों को समय समय पर सर्प विष के टीके लगाये जाते हैं और हर बार टीके में सर्प विष की मात्रा बढ़ा दी जाती है। एक समय ऐसा आता है जब घोड़े पर विष की किसी भी मात्रा का कोई प्रभाव नहीं होता। अब घोड़े के रक्त को निकाल कर उसका सिरम अलग कर लेते हैं। यह सिरम उस सर्प के लिए, जिसके विष के टीके घोड़े को लगाये गये थे, विशिष्ट एण्टीवेनम का कार्य करता है।

भारत में पायी जाने वाली मुख्य विषैली जातियां तथा उनके लक्षण नीचे दिए गए हैं।

कोबरा –

यह विषैला साँप प्रायः नाग कहलाता है। इस साँप की दस जातियां हैं। यह प्रायः सघन आबादी वाले भागों में पाया जाता है और प्रायः भूरा या काला होता है। इसकी लम्बाई लगभग ५॥ फीट तक होती है और सिर का भाग चौड़ा होकर फन बनाता है जिस पर विशेष प्रकार के चिह्न पाये जाते हैं। सिर से थोड़ा पीछे शरीर की अधर सतह पर दो काली धारियां पायी जाती हैं। इसकी पूँछ गोल होती है तथा अधर सतह के स्केल्स पूरी अधर सतह के आकार के होते हैं। ऊपरी जबड़े के किनारे पर पाये जाने वाले स्केल्स में तीसरा स्केल आँख तथा नासिका स्केल को छूता है। यह सर्प अत्याधिक विषैला होता है और मनुष्य के श्वसन संस्थान पर अपना प्रभाव डालता है।

क्रेट –

यह भी अत्यधिक विषैला साँप है और ३ से ५ फीट तक लम्बा होता है। इसकी पीठ काली होती है जिस पर चौड़ाई में सफेद धारियाँ पायी जाती हैं। अधर सतह सफेद होती है। पीठ पर लम्बाई में षटकोणीय स्केल्स की धारी पायी जाती है। यह रात्रिचर है तथा मेढक, चूहे आदि इसका मुख्य भोजन है। क्रेट की पूँछ गोल होती है और पूँछ की अधर सतह पर स्केल्स की केवल एक पंक्ति होती है।

वाइपर –

वाइपर का आकार लगभग ५ फीट तक होता है। इसकी पीठ हल्की भूरी और अधर सतह पीले रंग की होती है और अधर सतह पर गहरे रंग के धब्बों की तीन धारियां। सिर पर इङ्गलिश के अक्षर 'वी' के आकार का सफेद चिह्न होता यह फुंकार की आवाज भी देता है। वाइपर रात्रिचर है और प्रायः मैदानी क्षेत्रों में पाया जाता है। इस का विष मनुष्य के हृदय तथा तन्त्रिका संस्थान पर अपना प्रभाव डालता है।

पिट वाइपर –

पिट वाइपर प्रायः पहाड़ी क्षेत्रों तक सीमित है। इसका आकार प्रायः २ से ३ फीट होता है, पीठ भूरी तथा अधर सतह सफेद होती है। यह वाइपर से इस बात में भिन्न है कि इसकी आंख तथा नासिका के बीच एक पिट (दबाव) पायी जाती है।

समुद्री साँप—

पानी में पाये जाने वाले साँपों की मुख्य पहचान यह है कि इनकी पूँछ चपटी होती है जब कि स्थलीय साँपों की पूँछ गोल होती है। यह चपटी पूँछ साँप को पानी में तैरने में सहायक है। समुद्री साँप मांसाहारी होते हैं तथा मछलियों को खाते हैं। समुद्री साँप अत्यधिक विषैले होते हैं।

अतः हम देखते हैं कि साँपों को विभिन्न जातियों के अपने विशिष्ट लक्षण हैं जो उनकी पहचान कराने में सहायक हैं। यदि थोड़ा ध्यान से देखा जाये तो पहचाना जा सकता है कि साँप विषैला है अथवा नहीं, और यदि विषैला है तो किस जाति का है। इस प्रकार का ज्ञान हो जाने पर मनुष्यों में साँप के भय से हो जाने वाली मृत्यु को रोका जा सकता है और काटने वाले साँप की जाति का ज्ञान होने पर डॉक्टर को मनुष्य का उपचार करने में सुविधा होती है।

* * *

ब्रह्माण्ड

विजेन्द्र कुमार

ब्रह्माण्ड की आयु ३०-८० अरब साल है तथा हमारा सूरज लगभग १० अरब साल पुराना है। हमारी वर्तमान पृथ्वी ५ अरब साल पुरानी है। पृथ्वी पर सबसे आदिम जीव २ अरब साल पहले पैदा हुआ था और मनुष्य का पृथ्वी पर अवतरण १०-२० लाख साल पहले हुआ था। खेती १० हजार साल से पुरानी नहीं है और लिपि की खोज लगभग ६ हजार साल पहले हुई थी।

पूरे ब्रह्माण्ड में लगभग १९ अरब आकाश गंगायें हैं और हर आकाश गंगा में १० अरब तारे हैं और एक औसत आकाश गंगा का व्यास लगभग एक लाख प्रकाशवर्ष हैं। (एक प्रकाश-वर्ष वह लम्बाई होती है जितनी प्रकाश, 1,86,000 मील प्रति सेकण्ड की गति से एक वर्ष में चलता है)।

आधुनिक औषधियां कितनी सुरक्षित ?

—लोकेश कुमार राले

साधारण सी सर्दी, खांसी व अन्य छोटी मोटीं बीमारियों के लिए आजकल ब्रॉडस्पेक्ट्रम एन्टीबायटिक्स, जो अधिकांश रोगों में बिना निदान के भी लाभदायक होती है पर साथ ही वे विषाक्त भी बहुत हैं, बिना किसी सोच विचर के दे दी जाती है। किन्तु इसके भयंकर दुष्परिणाम हो सकते हैं। एन्टीबायटिक्स में तीव्रता अधिक होती है पर वे लाभ के साथ हानि भी पहुंचा सकती है। इनका प्रभाव शरीर में विष के समान घातक भी हो सकता है। पेनिसलीन, ए० टी० एस० आदि के विषाक्त प्रभाव के कारण मृत्यु के समाचार सर्व विदित है। औषधियों की योग्यता, अयोग्यता तथा प्रभाव क्षेत्र का निर्णय भी उनकी विषाक्तता के आधार पर किया जाता है ताकि कहीं वह औषधि जो कि किसी विशेष बीमारी या विशेष रोगाणुओं को सम्भावना से दे दी जा रही है इनकी अनुपस्थिति या रोगी की शारीरिक दुर्बलता या क्षीण प्रतिरोधात्मक क्षमता के कारण कोई अन्य विकार न उत्पन्न कर दे जिसका परिणाम जान लेवा भी हो सकता है। पेनिसलीन, क्लोरमफेनिकाल (क्लोरोमाइसिटीन), सल्फाथायजोल, सल्फानीलामाइड़ आदि के विषाक्त प्रभाव इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

एन्टीबायटिक्स—

इनके बारे में बहुत साधारण सी भाषा में कहा जा सकता है कि ये एक जीव से प्राप्त वे द्रव्य हैं जो कि दूसरे जीवों की वृद्धि में बाधक सिद्ध हो सकते हैं या उन्हें पूर्णतया नष्ट कर देते हैं। दूसरे जीवों से तात्पर्य रोगाणुओं और विषाणुओं से है। पांच दशक पूर्व जब एलेक्जेन्डर फ्लेमिंग ने पेनिसलीन की खोज की, तब से अब तक और विशेषकर पिछले तीन दशकों में कई नई और ज्यादा उपयोगी एन्टीबायटिक्स की खोज की जा चुकी है और यह खोज अब भी जारी हैं। पेनिसलीन-जी तथा प्रोकेन पेनिसलीन की जगह आज एंपीसिलीन ने लेली हैं। जब प्रारम्भ में इनके प्रभावों का अध्ययन किया गया तो इन्हें आश्चर्य एव प्राण रक्षक औषधि और न जाने किन-किन उपाधियों से विभूषित किया गया लेकिन बाद में इन्हीं एन्टीबायटिक्स के अनुपयुक्त व अविववेकशील उपयोग से इनके भयंकर दुष्प्रभावों का पता चला।

पेनिसलीन, स्ट्रेप्टोमाइसिन आदि एन्टीबायटिक्स कुछ लोगों में एलर्जी पैदा कर देती है। यह एलर्जी किसी भी रूप में व्यक्त हो सकती है जैसे- शरीर, मुँह पर चकत्ते या दाने, खुजली, उल्टी, दस्त, अंग विशेष में शोथ इत्यादि। कई बार यह एलर्जी इतनीं तीव्र हो जाती है कि शीघ्र ही उचित उपचार न किया जाये तो मृत्यु भी हो सकती है। गले सम्बन्धी तकलीफों के लिये अक्सर पेनिसलीन की गोलियां चूसने को दी जाती हैं जिससे मुंह में "कैंडिडा" नामक एक

फंगस की वृद्धि हो जाती है तथा मुंह से और जीभ पर सफेद परत सी जमने लगती है। स्ट्रेप्टोमाइसिन तपेदिक के लिये एक बहुचर्चित व प्रभावकारी औषधि है, महीनों तक इसके इंजेक्शन दिये जाते हैं। लेकिन साथ ही स्ट्रेप्टोमाइसिन से मांसपेशियों से दुर्बलता व पीड़ा तथा बहरापन तक प्रारम्भ हो जाता है। इसके अतिरिक्त जैंटामाइसिन, वायोमाइसिन इत्यादि एन्टीबायटिक्स से भी बहरापन हो जाता है। ग्राइसोफल्विन और इसी वर्ग की अन्य एन्टीबायटिक्स जो कि दाद जैसी फंगस के लिये प्रयुक्त होती है, हाथों पैरों के नर्वस सिस्टम पर कुप्रभाव डालती है।

क्लोरमफेनिकाल (क्लोरोमाइसिटीन) सरीखी खतरनाक औषधि टाइफाइड ज्वर, इन्फ्लूएंजल मेनिन्जाइटिस, क्रौनिक ब्रौंकाइटिस तथा कुछ मूल सम्बन्धी विकारों की उत्तम दवा है। चिकित्सक विशिष्ट अवस्थाओं में ही सारी सावधानी बरतते हुए इसका प्रयोग करते हैं। इसकी विषाक्तता के कारण एक विशेष प्रकार का रक्त विकार हो जाता है जिसे प्लास्टिक अनीमिया कहते हैं, जिस में रक्त के लाल कण प्रायः नष्ट हो जाते हैं। रोग अचिकित्स्य है तथा मृत्यु अवंश्वभावी है। इसका अनुपयुक्त प्रयोग बौन मैरो को भी प्रभावित करता है जिससे शरीर पर एक घातक प्रहार होता है।

कुछ बच्चों के दाँत जन्म से ही अच्छे नहीं होते। इसका एक कारण माता द्वारा गर्भावस्था में खायी गयी एन्टीबायटिक्स का कुप्रभाव है। दन्त विशेषज्ञों का विश्वास है कि प्रायः गर्भास्था के पहले व अन्तिम तीन महीनों में औरतों को एन्टीबायटिक्स खिलाये जाते हैं जिसका प्रभाव यह होता कि उनके बच्चों के दाँत शुरु से ही कम जोर पड़ जाते हैं और दाँतों की की अनेक बीमारियों से शीघ्र ही ग्रस्त हो जाते हैं। इन विषाक्त प्रभावों को उत्पन्न करने में टेट्रासायक्लिन वर्ग की एन्टीबायटिक्स का विशेष योगदान रहता है इसके अतिरिक्त इस वर्ग की एन्टीबायटिक्स से भूख में कमी, शरीर के भार में कमी, नाखून पीले पड़ना आदि विकार उत्पन्न हो जाते हैं। एन्टीबायटिक्स इस अवस्था में देना अनुचित नहीं कहा जा सकता लेकिन इन्हें तब ही दिया जाना चाहिये जब तक परम आवश्यक हो।

एनालजेसिक्स (पेन किलर्स)—

एसपिरीन (एसिटाइल सैलिरिलिक एसिड) सभी एनालजेसिक्स की एक मुख्य व आवश्यक अवयव है। इसकी मात्रा बाजार में साधारणतया मिलने वाले एनालजेसिक्स में १६० मिली ग्राम से लेकर ३८९ मिली ग्राम तक होती है। एसपिरीन एक अच्छी दर्द निवारक, एन्टी पायरेटिक (ज्वर कम करने वाली) और एन्टी इन्फ्लेमेटरी (शोथ कम करने वाली) दवा है यह अन्य इस प्रकार के गुणों वाली दवाओं से सस्ती और कम विषाक्त प्रभाव रखती है तथा ठीक ढंग से प्रयोग करने पर बहुत लाभदायक सिद्ध होती है। परन्तु अधिकतर एनालजेसिक्स और एन्टीपायरेटिक्स में एसपिरीन के साथ एक या ज्यादा दवाएं और मिली होती हैं, ये दवाएं प्रायः फिनेसिटीन, कैफीन, कोडीन सल्फेट आदि होती हैं। यह सिद्ध हो जुका है कि फ़िनेसिटीन, हीमोग्लोबीन पर कुप्रभाव ठालती है और इससे कुछ लोगों में हीमोलाइटिक एनीमिया भी हो सकता है। जिन लोगों में एन्जाइम (ग्लूकोस—६ फास्फेट डिहाइड्रोजन) की

कमी होती है वे यदि इसका उपयोग कम भी करें तो भी इसके कुप्रभावों से ग्रस्त हो जाते हैं। इस बात के भी प्रमाण मिलें हैं कि इसके अधिक मात्रा में या ज्यादा समय तक के प्रयोग से वृक्क बहुत ही प्रभावित होते हैं और इससे मृत्यु तक भी हो सकती है। जो लोग पहले ही किसी वृक्क विकार से पीड़ित है उनके लिये यह और भी घातक सिद्ध होती है। इस बात का कोई प्रमाण नहीं हैं कि दो या दो से अधिक एनालजेसिक्स का मिश्रण एक एनालजेसिक्स से, सिर दर्द के लिये ज्यादा लाभप्रद हो। इसलिये फिनेसिटीन का एनालजेसिक्स मिश्रणों में डाला जाना कहां तक तर्क संगत है? कैफीन यद्यपि एनालजेसिक तीव्रता को नहीं बढ़ाती फिर भी मानसिक व कुछ हद तक शारीरिक थकान को दूर करती है। परन्तु अधिकतर एनालजेसिक में जितनी कैफीन होती है उससे कहीं ज्यादा एक कप तेज चाय या काफी से प्राप्त की जा सकती है। इसी प्रकार कोडीन सल्फेट जो कि खांसी के प्रभाव को कम करती है और एनालजेसिक्स में दर्द कम करने के उद्देश्य से मिलाई जाती है, ज्यादातर में १० मिलीग्राम से कम होती है। एक आदर्श एनालजेसिक में फ़िनेसिटीन मुक्त एसपिरीन होनी चाहिए और यदि कैफीन या कोडीन मिली हो तो कम से कम ३० मिलीग्राम और १० मिलीग्राम होनी चाहिये। एसपिरीन जहां एक ओर आवश्यक व उचित प्रयोग से एक प्रभावशाली औषधि सिद्ध होती है वहां दूसरी ओर अनावश्यक व अधिक मात्रा में लेने से हाइपर एसिडिटी उत्पन्न कर देती है, पेट व आंतो से रक्तस्राव प्रारम्भ हो जाता है और पैप्टिक अलसर तक की स्थिति आ जाती है। इस अवस्था में नोवल्जिन, प्रेडनीसोलोन एसपिरीन वर्जित है।

विटामिन व टानिक—

विटामिन ए नेत्र ज्योति तथा अस्थियों के लिए उपयोगी होता है परन्तु इसके अत्यधिक सेवन से तीन चार–मास में अस्थियों में पीड़ा युक्त शोथ, अस्थियों का अनावश्यक विकास (विशेष कर बच्चों में), भूख का न लगना, खुजली होठों पर पपड़ी बनना, शरीर की चमड़ी का फटना तथा बालों का झड़ना आदि लक्षण उत्पध्न होते हैं। विटामिन "के" तथा "सी" का अनावश्यक सेवन 'रक्त स्कन्दन' की क्रिया को हानि पहुंचाता है, आयरन युक्त गोलियां, कैप्सूल टॉनिक आदि आदि रक्ताल्पता की अच्छी दवाएं हैं पर आयरन अधिक होने पर शरीर से निष्कासित नहीं होता और आभ्यंतरिक कोशिकाओं में जमने लगता है, फलतः ये कोशिकाएं कड़ी होकर (फाइब्रोसिस) निष्क्रिय होने लगती हैं। आंतों की फाइब्रोसिस मृत्यु कारक हो जाती है। इसीप्रकार 'ए' के साथ विामिन 'बी' का अनुचित प्रयोग गुर्दे में पथरी पैदा कर सकता है।

* * *
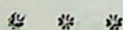
लिग-निर्धारण

अवधेश कुमार अग्रवाल

मनुष्य के अस्तित्व के प्रारम्भ से ही जीव दो प्रकार के जाने जाते हैं। एक नर तथा दूसरा मादा। मनुष्य ने सदा यह जानने की कोशिश की है कि होने वाला बच्चा नर होगा या मादा अरस्तू का अनुमान था कि यदि कन्सेपशन के समय हवा उत्तर की तरफ बहती है तो लड़का होगा तथा यदि हवा दक्षिण की दिशा में बहती है तो लड़की होगी। कुछ लोगों का विचार था कि दायें अंडाशय में नर तथा बायें में मादा बनती हैं। किन्तु २० वीं शताब्दी में ये सब अनुमान निराधार बताये गये क्योंकि तब आनुवाँशिकी व वर्धन का ज्ञान हो चुका था वास्तव में अधिकतर जन्तुओं में सेक्स उसी समय निश्चित हो जाता है जिस समय निषेचन होता है। और यह सब गुणसूत्र पर निर्भर करता है, जो अण्डे को माता-पिता से मिलते हैं।

लिंग निर्धारण की क्रिया सभी जन्तुओं में समान नहीं है। अधिकतर जन्तुओं में यह गुण सूत्र पर निर्भर करता है। किन्तु कुछ जन्तुओं में अन्य कारण भी होते हैं। लिंग निर्धारण के कुछ सिद्धान्त निम्न है—

१. XO व XX सिद्धान्तः— यह सिद्धान्त विलसन तथा स्टीपेन्स (१६०५) ने रखा था। उन्होंने देखा कि नर स्कवैश बग्स में मादा की अपेक्षा एक गुणसूत्र कम होता है। उन्होंने नर की इस अवस्था को XO अवस्था कहा। उसी समय में मिलिविवड बग में देखा गया कि यद्यपि नर व मादा में गुण सूत्रों की संख्या समान है किन्तु नर में क्रोमेटिड एक्स का साथी गुणसूत्र छोटा होता है व भिन्न प्रकार का होता है। विलसन व स्टीवेन्स (१६०५) ने एक्स गुणसूत्र के इस छोटे साथी को Yगुणसूत्र कहा। बाद में देखा गया कि एक्सवाई अवस्था प्रायः पायी जाती है। XX या XY गुण सूत्रों को सेक्स गुण सूत्र तथा अन्य को आटोसोम्स कहते हैं। XO या XY गुण सूत्रों के विचार को हम इस प्रकार दिखा सकते हैं।

(अ) XO या XY विचार में विभिन्नतायें:– XY का जोड़ा तो नर मनुष्य में पाया जाता है। किन्तु इससे भिन्न प्रकार के सम्बन्ध भी अनेक प्रकार के जन्तुओं में पाया जाया है जैसे—

(i) कभी २ सेक्स क्रोमोसोम्स अलग नहीं पहचाने जाते बल्कि सेक्स लिंक्ड जीनस पर रहते हैं।

(ii) कभी २ X व Y गुणसूत्र किसी ऑटोसोम्स के साथ चिपके रहते हैं या Y गुणसूत्र टुकड़ों में बंट जाता है।

(iii) कभी२ XX जोड़ा नर में तथा XY जोड़ा मादा में पाया जाता है जैसे पक्षियों में।

(iv) शहद की मक्खी व ततैये में सेक्स क्रोमोसोम्स मादा में डिपलायड तथा नर में हेपलायड होते है। इस प्रकार अनेक प्रकार के सम्बन्ध विभिन्न जन्तुओं में पाया जाता है।

(v) लिंग गुणसूत्रों के कार्य:—विटसन तथा स्टीवेंस के प्रयोगों से सेक्स क्रोमोसोम्स का महत्व तो स्पष्ट अवश्य हो गया किन्तु सेक्स निश्चित करने में सेक्स क्रोमोसोम्स का वास्तविक कार्य क्या है। इस बारे में अनेक उलझने बनी रहीं। मुख्य प्रश्न यह था कि क्या Y गुणसूत्र की उपस्थिति का अर्थ जीव का नर होना है या नहीं। ड्रोसोफिला में यह देखा गया कि साधारण मादा में दो X तथा एक Y गुणसूत्र (XXY) था। तथा साधारण नर में केवल एक X गुणसूत्र तथा Y नहीं था अर्थात् XO अवस्था। लगभग सभी चिड़ियों में नर में XX तथा मादा में XY अवस्था पायी जाती है। इन्हीं उदाहरणों ने उलझने उत्पन्न की तथा इनका हल दिया पैटर्सन नामक वैज्ञानिक ने पैटर्सन ने कहा कि नर या मादा होना नर के X गुणसूत्र पर निर्भर करता हैं तथा X गुणसूत्र कोई मुख्य भूमिका नही निभाता उसका विचार यह था कि प्रत्येक नर शिशु मादा से एक X गुणसूत्र तथा दूसरा पिता में प्राप्त करता है। यह दोनों X गुणसूत्र मॉरगन के अनुसार एक प्रकार के होते है अतः पैटर्सन ने कहा कि नर या मादा होना X गुणसूत्र पर निर्भर, संख्या के अनुसार करता हैं। यदि X क्रोमोसोस एक है तो नर व अधिक हैं तो मादा पैटर्सन के अध्ययन को मारगन मथा ब्रिग्स (१९१६) की खोजों द्वारा सहारा मिला। मारगन ने बताया कि Y गुणसूत्र पर जीन नहीं होते और यह निष्क्रिय होते हैं जबकि X गुणसूत्र पर सेक्स लिंक्ड जीन होते हैं। यद्यपि नयी खोजों से पता चला है कि मनुष्य के Y गुणसूत्र पर भी सेक्स लिंक्ड जीनस होते है।

२. **जीवन संतुलन सिद्धान्त:**— लिंग क्रोमोसोम्य की महत्व ज्ञात हो जाने के बाद शीघ्र यह बात भी स्पष्ट होने लगी कि लिंगनिर्धारण पूर्णतया लिंग-क्रौमोसोम्स पर निर्भर नहीं करता बल्कि कुछ और भी बातें हैं जो इसपर असर डालती हैं। ब्रिग्स ने ड्रोसोफिला कीट पर प्रयोग किया व जीन संतुलन सिद्धान्त को सामने रखा। यह सिद्धान्त उन जीनस के विषय में बताती है जो नर या मादा बनाने में भाग लेते हैं तथा X क्रोमोसोम्य पर तथा आटोसोमस पर लगे रहते हैं। ड्रोसोफिला में नर व मादा की अनेक जातियाँ पायी जाती हैं जो लिंग गुणसूत्र तथा आटोसोम के कारण हैं जैसे:—

XXX आटोसोम्य के ३ जोड़ों के साथ–मादा
X आटोसोम के ३ जोड़ों के साथ–नर

अतः ब्रिग्स के अनुसार X क्रोमोसोम लिंग निश्चित नहीं करता अपितु लिंग X गुणसूत्रों व आटोसोम्य पर पाये जाने वाले जीन के अनुपात पर निर्भर करता है। अतः इस विचार के अनुसार नर व मादा के जीन्स X गुणसूत्र व आटोसोम्य दोनों पर पाये जाते हैं और एक ही समय पर

दोनों सेक्स के कार्य करते हैं। इस प्रकार निम्न जातियाँ बनाती है।

(क) XX आटोसोन के ३ जोड़ों के साथ
XXX ,, ,, ४ ,, ,,
(ख) XXX आटोसोम के २ जोड़ों के साथ
XXXX ,, ,, ,, ,, मेटाफिमेल
(ग) X ,, ,, ३ ,, ,, मेटामेल

ड्रोसाफिला की आटोसोमस के एक जोड़े में ६ गुणसूत्र होते हैं। इन प्रयोगों से स्पष्ट कि नर जीन ओटोसोम्स पर पाया जाता है और मादा X गुणसूत्रों पर तथा आटोसोम्स के दो जोड़ों पर पर्याप्त नर जीन होते हैं जो X गुणसूत्र के मादा जीन का प्रभाव भी ढक लेते हैं अतः यदि X की संख्या आटोसोम्स में सामान्य जोड़े से अधिक हो जाती हे तो मादा बनता है और यदिआटोसोम्स जोड़े की संख्या X गुणसूत्र की सामान्य संख्या से बढ़ जाती है तो नर बनता है। इसी प्रकार किसी मनुष्य में यदि एक X गुणसूत्र पाया जाता है तो वह नर बनता है क्योंकि आटोसोम्य पर नर जीन X गुणसूत्र पर पाये जाने वाले मादा जीन को ढक लेता है। किन्तु यदि दो XX गुणसूत्र है तो XX पर पाये जाने वाले मादा आटोसोम पर होते हैं, और नर X गुणसूत्र पर अतः उन चिड़ियों पर जिनमें एक Xगुणसूत्र होने पर मादा तथा XX होने पर नर होते हैं।

३. हार्मोन सिद्धान्त:— छोटे प्राणियों पर जीन संतुलन सिद्धान्त सफलता पूर्वक कार्य करता है तथा उच्च प्राणियों में गौनेडस द्वारा बनाये गये हार्मोन्स का पर्याप्त प्रभाव देखा गया हैं। यह सिद्धान्त क्रीव द्वारा चिड़ियों पर किये गये प्रयोगों पर आधारित है। क्रीव ने देखा कि एक मुर्गी जो निषेचित अंडा बनाती है टयूवरकुलेसिस द्वारा अपना अंडाशय नष्ट कर देती है। उसने शुक्राणु बनाने प्रारम्भ कर दिये और उसमें कलगी बन गयी तथा वह मुर्गी मुर्गे में परिवर्तित हो गई। क्रीव के अनुसार जब अंडाशय नष्ट हो गया तो अंडाशय द्वारा उत्पन्न होने वाला हार्मोन बनना बंद हो गया जिसे सुषुप्त वृषण जो प्रायः सभी चिड़ियों में उपस्थित होता है विकसित होना प्रारम्भ हो गया। इन वृषों हार्मोन बनाने प्रारम्भ कर दिये जिसके द्वारा कलगी बन गयी तथा यहाँ तक की आवाज में भी परिवर्तन हो गया। ऐसे ही उदाहरण उभयचर, मछली व कबूतर वर्गों से भी प्राप्त होते हैं—

केटलस में पायी जाने वाली फ्री मोशन में भी लिंग हार्मोन का प्रभाव देखने में आता है। फ्री मोशन में विपरीत सेक्स में जुड़वा बच्चे होते है। जिनमें नर तो सामान्य होता है किन्तु मादा स्टीराइल होता है। लिलि ने इसका अध्ययन किया व पाया कि विकास के प्रारम्भ में कामन बल्ड वेसल होने के कारण नर भ्रूण का रक्त मादा में तथा कादा भ्रूण का रक्त नर में जाता है। इन रक्तों में हार्मोन्स भी होते हैं। अतः हार्मोन्स मिल जाते हैं। अतः चूंकि नर हार्मोन पहले बनते हैं अतः मादा में गौनेड के विकास की दिशा नर की ओर के विपरीत होती है। किन्तु मादा में हार्मोन्स

चूंकि बाद में बनते हैं अतः नर के गौनेड पर अपना प्रभाव नहीं डाल पाते।

४. वातावरणीय प्रभाव का सिद्धान्त—बेल्टजार के अनुसार वातावरण भी सेक्स के बनने में सहायता करता है बेल्टजार ने बोनोगिया का उदाहरण रखा। इसका गर्मी में लार्वा जब स्वतन्त्रता से पानी में तैर रहा होता है तो यदि मादा प्रौढ़ के के सम्पर्क में आ जाता है तो नर बन जाता है तो मादा बनता हैं। अतः मादा का स्पर्श सेक्स निर्धारित करने में सहायक हैं। एक अन्य उदाहरण ओपरुयोट्रोका ओवरी का है जो नर की भांति कार्यकरता है, किन्तु जब वह पुराना हो हो जाता है और २० से अधिक खण्ड बना लेता है तो वह मादा बन जाता है। यदि इसके खंडों को काट कर या भोजन न देकर छोटा रहने दें तो यह नर की भाँति कार्य करेगा।

रोटीफर्स में यदि आक्सीजन व भोजन की मात्रा कम या परिर्तित कर दी जाये तो विकसित होने वाले भ्रूण में लिंग को बदला जा सकता है।

अतः हम देखते हैं कि यद्यपि अधिकतर जन्तुओं में लिग के निर्धारण का आधार गुणसूत्र हैं किन्तु कुछ जन्तुओं में वातावरण भी चाहे वह बाहरी हो या जन्तु के भीतर का ही लिंग के निर्धारण पर अपना प्रभाव डालता हैं।

* * *

पैट्रोलियम भी कोयले के सामान एक जो वाशय ईंधन है। वैज्ञानिकों का कहना है कि पेट्रोलियम लाखों करोड़ों वर्ष पहले उथले पानी में उपजने वाले पादपों से बना है।

ग्रहों का मानव जीवन से सम्बन्ध

धीरेन्द्र सिन्हा

"ग्रह मनुष्य के तुच्छ शरीर पर शासन करते हैं और बड़ी सरलता से उसके जीवन में उतार-चढ़ाव लाते हैं"। — मिल्टन

ग्रहों का अध्ययन बहुत प्राचीन काल से होता आया है। सबसे प्राचीन कृति सारगन I के लघु लेख माने जाते हैं जो कि ३८०० बी.सी. में लिखे गये।

ग्रहों का अध्ययन खगोल विज्ञान व ज्योतिष शास्त्र में होता आया है। वास्तव में जहां हिन्दू ऋषि-मुनि ग्रह विज्ञान के ज्ञाता थे वहां चीनी खगोल विज्ञान के। इस बात के प्रबल प्रमाण मिलते है कि चन्द्र ग्रहण का अध्ययन खगोल विज्ञान व ग्रह विज्ञान दोनों हो दृष्टि से ११३६ बी.सी. में किया गया। ग्रीक खगोल विज्ञान की कहानी का प्रारम्भ थेल्स के जन्म से (६२४ बी. सी.) माना गया है। पैट्रिक मूर ने अपनी पुस्तक गाइड टू द प्लैनेट्स में लिखा है कि "खगोल विज्ञान सभी विज्ञानों से प्राचीनतम हैं। परन्तु अनेक तथ्यों से ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है कि ज्योतिष शास्त्र प्राचीनतम विज्ञान था न कि खगोल विज्ञान। महाभारत युद्ध में भीष्म ने अपनी मृत्यु की इच्छा सूर्य उत्तरायण होने पर व्यक्त की और वह शर-शय्या पर लेटे रहे। वास्तव में भीष्मपितामह ज्योतिष शास्त्र के महान् विद्वान थे। ज्योतिष के अनुसार सूर्य उत्तरायण होने पर देवयान प्राप्त होता है। यह घटना ५००० वर्ष पूर्व की है।

सत्य तो यह है कि ज्योतिष शास्त्र उतना ही प्राचीन है जितने वेद आदि क्योंकि अथर्ववेद में ज्योतिष शास्त्र नामक शीर्षक के अन्तर्गत १६५ मन्त्र आए हैं। तब तक ज्योतिष शास्त्र के अन्तर्गत सूर्य व चन्द्र की विविध गतियों का व उनके प्रभावों का अध्ययन होता आया था। वेदों में लिखे मन्त्रों के द्वारा इसे इस संसार से सम्बन्धित किया गया व इसकी उपयोगिता व वैज्ञानिकता को प्रमाणित किया गया। अतः आधुनिक ज्योतिष का निर्गम हम अथर्ववेद ज्योतिष से मान सकते हैं। इसके अतिरिक्त पाराशर वराहमिहिर भृगु महाराज आदि के ग्रंथ प्रमाणिक हैं।

हमारे ब्रह्माण्ड में सात प्रमुख ग्रह सूर्य, चन्द्र, बुद्ध, शुक्र, शनि, बृहस्पति, मंउल हैं। इस के अतिरिक्त यूरेनस नेपच्यून व प्लूटो को भी सम्मिलित किया गया है। परन्तु हमारी हिन्दू पद्धति में सू०, मं०, बु०, बृ०, शु०, श० के अतिरिक्त राहू व केतु को माना गया है। इनमें से प्रत्येक ग्रह का अपना पृथक व स्पष्ट प्रभाव मानव जीवन पर है। यह तो वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित है कि ज्वार भाटे का कारण चन्द्र है।

न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम से पता चलता है कि विश्व की किन्हीं दो लघुतम अथवा

दीर्घतम निकायों के बीच निरन्तर आकर्षण बल लगता है। अन्य आकाशीय - पिण्डों की अपेक्षा सूर्य व चन्द्र की पृथ्वी से निकटता के कारण आकर्षण शक्ति का प्रभाव पृथ्वी पर अधिक पड़ता है। चूंकि चन्द्रमा पृथ्वी से सूर्य की अपेक्षा अधिक निकट है, अतः छोटा होने पर भी सागरीय जल को आकर्षित करने में अधिक प्रभावी होता है। यही कारण है कि परिक्रमा करते हुए जब पृथ्वी चन्द्र और सूर्य एक सीध में आ जाते हैं तब उनकी सम्मिलित आकर्षण शक्ति से सबसे अधिक ऊंचे ज्वार आते हैं जिन्हें बृहत ज्वार कहते हैं। ऐसा केवल पूर्णमासी व अमावस्या को होता है।

इसके विपरीत कृष्ण व शुक्ल पक्ष की अष्टमी के दिन चन्द्रमा, सूर्य व पृथ्वी समकोण पर होने के कारण अपने आकर्षण प्रभावों को न्यूट्रल कर देते हैं, फलतः लघु ज्वार आता है।

ग्रहों के प्रभाव की एक नवीनतम घटना पूर्ण सूर्य ग्रहण हैं जो कि १९८० में हुआ था। सूर्य-ग्रहण पर सूर्य व पृथ्वी के बीच चन्द्रमा आ जाता है जिससे विश्व के किसी एक क्षेत्र या भाग में सूर्य की किरणों का पहुंचना बन्द हो जाता है।

भारत में पूर्ण सूर्य ग्रहण (१९८०) के अवसर पर विविध घटनाओं का अध्ययन किया गया। जैसे ही सूर्य का प्रकाश पृथ्वी पर पहुंचना बन्द हुआ कुछ ही क्षणों में सभी जीव-जन्तु शान्त, निश्चल व गतिहीन से हो गये। चारों ओर निस्तब्धता सी छा गई जैसे पृथ्वी पर जीव न हो। सूर्य, जिसे शक्ति, स्फूर्ति व आकाश का राजा कहा जाता है, के छिप जाने पर इन घटनाओं का होना स्वाभाविक प्रतीत होता है।

ग्रहों के मानव जीवन पर प्रभाव के बीच तरंगों का सिद्धान्त छिपा हुआ है। प्रत्येक ग्रह निरन्तर तरंगें उत्सर्जित कर रहा है तथा जब मानव का जन्म होता है तब वह किसी निश्चित ग्रह की छाया में रहता हैं और उसी ग्रह की तरंगों के द्वारा उसकी सर्वाधिक प्रबल विशेषताओं, प्रवृतियों आदि का निर्माण होता है। यह एक वैज्ञानिक तथ्य है।

* * *

फ़ोटोफ़ोन—

वह ज़माने लद चुके जब आप और वह फ़ोन पर
बात कर लेते थे, पर दीदार से महरूम थे।

अब तो फ़ोटोफ़ोन है डायल घुमा कर देखिये,
बात भी हो जायेगी दीदार भी हो जायेगा।

— फ़ारिग़

बौने पौधे

आर० सी० शर्मा

छोटा सा आँगन मेरा,
और फैली इसमें छाँव धूप ।
सिमट–सिमट कर बन गया,
वट विशाल का बौना रूप ।

वनस्पति का मानव से शाश्वत सम्बन्ध है । मनुष्य के आगमन से पूर्व ही वनस्पति विश्व के धरातल पर विद्यमान थी । वनस्पति मनुष्य के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में पूर्ण सहायक है । इतना ही नहीं, वनस्पति विश्व में उस निराकार प्रभु का साकार स्वरूप भी है । यह वनस्पति ही तो मनुष्यत्व एवं देवत्व के मध्य सम्बन्धों का प्रमुख माध्यम रही है । हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने वनस्पति के बीच बैठकर ईश्वर का साक्षात्कार किया ।

हमारे सभी धार्मिक कार्यक्रम, पूजा, विवाह, यज्ञ आदि आज भी तुलसी, पीपल, बरगद, ढाक, और आम के पत्तों के बिना सम्पन्न नहीं होते ।

इसी विचार श्रृन्खला की तारतम्यता में मेरे मन में भी विशाल वृक्षों को छोटा बनाकर घर और ड्राईंगरूम को नेचूरल तरीके से सजाने की बात सूझी । क्या बड़े-बड़े विशाल पौधों को बौना बनाया जा सकता है ? अचानक ही एक दिन जब मेरी निगाह पुरानी दीवार पर उगे, कई वर्ष पुराने, छोटे से बरगद पर पड़ी, तो उसी से प्रेरित होकर मैंने बौने पौधे बनाने शुरु कर दिये ।

जापान में प्राचीन काल से इस कला का बहुत प्रचलन रहा हैं । आज विश्व के अनेक दूसरे देशों में भी बहु मंजिली इमारतों में बसने वाले लोगों में, बौने पौधों से घर सजाने का फैशन है चूँकि थोड़ी सी जगह में ही इस प्रकार के कई पौधे सुविधा से रखे जा सकते हैं ।

बौने पौधे लगाने की विधि—

इन बौने पौधों को बनाने के लिये कटिंग अथवा बीज से पौधे उगाये जाते हैं । इन्हें छोटे-छोटे खूबसूरत आकार वाले गमलों में मिट्टी और पत्तियों की खाद मिलाकर लगाया जाता है । इन पौधों को नम और छायादार स्थानों में रखा जाता है ।

इनकी शाखाओं को तरीके से खास दिशा में तराश कर, और मोड़कर इन्हें और भी ज़्यादा आकर्षक बनाया जा सकता है । इनके लिये **पानी का विशेष ध्यान रखा** जता है । बौने पौधों में अपने अलग,अलग मौसम पर जब फूल और फल लगते हैं तो इनका सौन्दर्य देखते ही बनता है ।

बौने पौधे लगाने का समय—

आप स्वयं भी बौने पौधे, जैसे–बरगद, पिलखन, सेमल, अनार, चीड़, गूलर और खिरनी आदि तैयार करके अपने आँगन और ड्राईंगरूम की शोभा बढ़ा सकते हैं । इन पौधों को लगाने का **उपयुक्त समय फरवरी** का अन्तिम सप्ताह **मार्च का प्रारम्भ** तथा **जौलाई** एवं **अगस्त का** महीना होता है ।

विश्व में जिस दिन वनस्पति नहीं रहेगी उस दिन मानव का अस्तित्व भी समाप्त हो जायेगा ।

एवोगाद्रो परिकल्पना त्रुटिमय

– कुलदीप कुमरा मेहता

एवोगाद्रो परिकल्पना के अनुसार "समान दाब व ताप पर गैस के समान आयतन में अणुओं की संख्या समान होती है।"

इस परिकल्पना के अनुसार "यदि हम एक गैस को निश्चित आयतन के बर्तन में निश्चित ताप व दाब पर ले, तो उसमें गैस के अणुओं की संख्या निश्चित होगी। लेकिन यदि हम दाब अथना ताप में से कोई भी कारक (बिना आयतन बदले) परिवर्तित करें तो एवोगाद्रो परिकल्पना के अनुसार अणुओं की संख्या परिवर्तित होनी चाहिये लेकिन ऐसा नहीं होता! गैस के अणुओं की संख्या में परिवर्तन तब तक नहीं होगा, जब तक गैस के बर्तन में, (निश्चित आयतन पर), बाहर से गैस न प्रवेश कराई जाये। अतः इससे यह स्पष्ट होता है कि एवोगाद्रो परिकल्पना में उल्लेखित दाब व ताप का कोई महत्व नहीं है। इस परिकल्पना में दाब व ताप का महत्व इस प्रकार सिद्ध किया जा सकता है, अगर हम एवोगाद्रो परिकल्पना का उल्लेख निम्न रूप से करें–

"दाब व ताप के समान अनुपात पर (अर्थात् $\frac{\text{दाब}}{\text{ताप}}$ = स्थिरांक) गैस समान आयतन में अणुओं की संख्या समान होती है।"

उपरोक्त परिकल्पना के अनुसार यदि हम दाब व ताप में से कोई कारक परिवर्तित करें तो दूसरा कारक भी उसी परिमाण में परिवर्तित हो जाएगी अतः $\frac{\text{दाब}}{\text{ताप}}$ अनुपात भी नियत रहेगा क्योंकि वायल के नियम के अनुसार $\frac{\text{दाब}}{\text{ताप}}$ नियत (समान आयतन के लिए) होता है। जब दाब व ताप का अनुपात नियत रहेगा तो अणुओं की संख्या भी नियत रहेगी।

* * *

वनस्पति—

जन्म सागर में विजय धरती पर
वांह क्या रंग है वनस्पति पर।

—फारिश

जुल्म

—शंकर बदायूंनी

मज़हब के नाम पर न करो ज़ुल्म दोस्तो,
सच बात को क़ुबूल करो ख़ुदा से डरो।

ब्रूनो को ज़िन्दा आपने क्यूँ कर जला दिया
गेलीलियों को कारागार में बसा दिया।

क्या इससे ज़मीं घूमने से बाज़ आ गई
या आपके मज़हब में कोई जान आ गई।

होता नहीं अच्छा, हो नशा चाहें किसी का
मज़हब का हो, दौलत का हो या लालपरी का।

❀ ❀ ❀

"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति एवं कुलपति विज्ञान महाविद्यालय के प्राचार्य एवं अध्यापकों के साथ
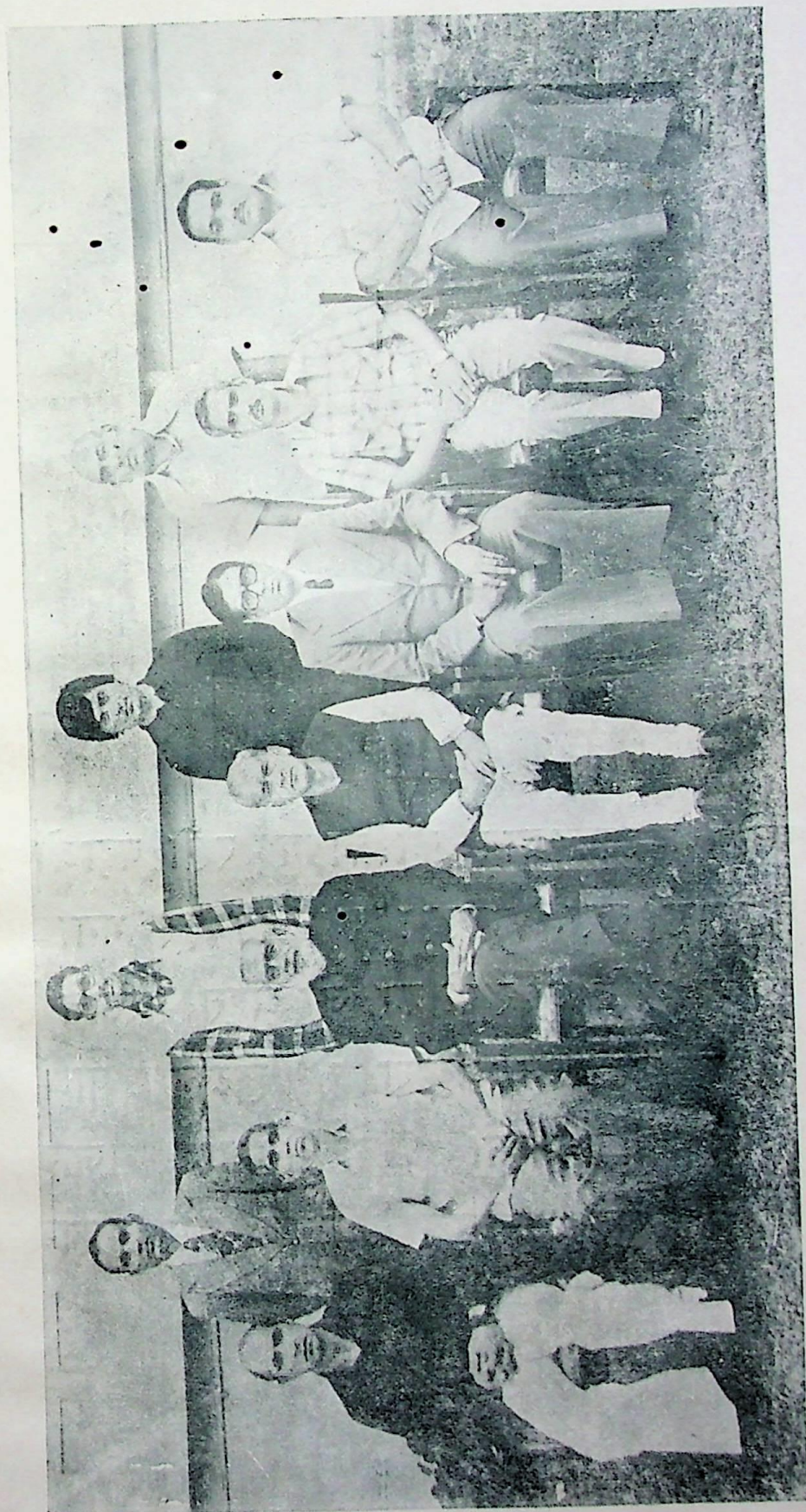
वायें से दायें बैठे हुए : डा० तिलकराज, डा० विजयशंकर, श्री जी० बी० के० हूजा (कुलपति), श्री वोरेन्द्र जो (कुलाधिपति), श्री सुरेश चन्द्र (प्राचार्य), डा० ताराचन्द, श्री विजेन्द्रकुमार

वायें से दायें खड़े : डा० पुरुषोत्तम, श्री कौशल कुमार, श्री वेद प्रकाश, श्री हरबन्स लाल ।

वृक्षारोपण

धरती के उपजाऊपन को कायम रखो बढ़ाओ ।
वृक्षारोपण करो, अपरदन को अब दूर भगाओ ॥
शिव की भांति ज़हर पी कर जो अमृत बरसाते हैं ।
उन्हें उगा कर आज प्रदूषण से छुटकारा पाओ ॥
हरे-भरे नाना रंगों वालों से भूमि सजाओ ।
मिले सभी कुछ जिन वृक्षों से उनको शीश झुकाओ ॥

—फ़ारिग

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी मुद्रणालय, हरिद्वार